

18. मुक्तानि मुक्तकानि

संस्कृत साहित्य में प्रहेलिका, कूटश्लोक, प्रश्नोत्तर जैसे विविध प्रकार के हास्य उत्पन्न करनेवाले मुक्तक विपुल मात्रा में रचे गए हैं। मुक्तक प्रकार की यह रचना कभी श्लेष तो कभी संधि का प्रयोग करके चमत्कार उत्पन्न करती है। तो कभी समास को बदल देने से या फिर कभी अन्वय को बदल देने से द्विविध (दोहरा) अर्थ दे करके चमत्कार उत्पन्न करती है।

इस प्रकार के मुक्तक एक साथ, एक ग्रंथ में नहीं पाए जाते उनकी रचना एक साथ नहीं की जाती, अपितु ऐसे मुक्तक समय-समय पर अलग-अलग प्रदेशों में विद्वान कवियों द्वारा रचे जाते हैं और इनका संग्रह भी भिन्न ग्रंथों में होता रहता है। वर्तमान-समय में ऐसे मुक्तकों का संग्रह करके उसे 'सुभाषितरत्नभाण्डागार' के नाम से प्रकाशित किया गया है।

प्रस्तुत पाठ में अनेक प्रकार से, अनेक प्रकार का चमत्कार उत्पन्न करनेवाले आठ पद्यों का संग्रह किया गया है। इस प्रकार के चमत्कार मात्र मनोरंजन के लिए ही हैं, ऐसा बिल्कुल नहीं है। शाब्दिक और आर्थिक रूप से चमत्कार उत्पन्न करनेवाले इन पद्यों में मानव जीवन को उत्तम बनाने के लिए उपाय और उपदेश दिए गए हैं। इन उपदेशों के अनुसार जीवन जीकर मानव चहुँमुखी सफलता प्राप्त कर सकता है, साथ ही अपने जीवन को सुखी बना सकता है।

पिनाक-फणि-बालेन्दु-भस्म-मन्दाकिनीयुता ।

पवर्गरचिता मूर्तिरपवर्गप्रदास्तु वः ॥ 1 ॥

भगवन् किमुपादेयं गुरुवचनम्, हेयमपि च किमकार्यम् ।

को गुरुरधिगततत्त्वः, शिष्यहितायोद्यतः सततम् ॥ 2 ॥

अपूर्वोऽयं मया दृष्टः कान्तः कमललोचने ।

शोऽन्तरं यो विजानाति स विद्वान्नात्र संशयः ॥ 3 ॥

शस्त्रं न खलु कर्तव्यमिति पित्रा नियोजितः ।

तदेव शस्त्रं कृतवान् पितुराज्ञा न लङ्घिता ॥ 4 ॥

वृक्षस्याग्रे फलं दृष्टं फलाग्रे वृक्ष एव च ।

अकारादि सकारान्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ 5 ॥

यथा नयति कैलासं नगं गानसरस्वती ।

तथा नयति कैलासं न गङ्गा न सरस्वती ॥ 6 ॥

युधिष्ठिरः कस्य पुत्रो गङ्गा वहति कीदृशी ।

हंसस्य शोभा का वास्ति धर्मस्य त्वरिता गतिः ॥ 7 ॥

द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मदगेहे नित्यमव्ययीभावः ।

तत्पुरुष कर्मधारय येनाहं स्यां बहुव्रीहिः ॥ 8 ॥

टिप्पणी

संज्ञा : (पुल्लिंग) उद्यतः उद्यत, तैयार कान्तः प्रियजन शः ‘श’ वर्ण, शकार नगः पर्वत, गिरि कैलासः (कैलास) इस नाम का पर्वत द्वन्द्वः, द्विगुः, अव्ययीभावः, तत्पुरुषः, कर्मधारयः, बहुव्रीहिः ये सभी समास के प्रकारों के नाम हैं (समास के इन प्रकारों में से कुछ समास आप कक्षा नौ में सीख चुके हैं। अन्य समास अध्यास पाँच में दिए गए हैं) इसके साथ इन शब्दों का अपना भी एक अर्थ होता है, जैसे द्वन्द्वः दो-दो की जोड़, युग्म द्विगुः दो गायों का समूह अव्ययीभाव अर्थात् जिसका व्यय न हो, जिसमें घटने का अभाव हो ऐसे समास को अव्ययीभाव कहा जाता है। तत्पुरुष (इस पद में अलग-अलग विभक्तियों वाला तत्पुरुष समास माना जा सकता है। इनके अनेक अर्थ निकलते हैं। यहाँ षष्ठी तत्पुरुष समास मानकर ‘तस्य पुरुषः उसका पुरुष’-ऐसा अर्थ लिया जाता है।) कर्मधारय (इस पद को कर्म और धारय - इस तरह दो भागों में बाँटकर कर्म को धारण करना - ऐसा अर्थ मिलता है।) बहुव्रीहि शब्द में (बहवः व्रीहयः सन्ति यस्य सः बहुव्रीहिः - इस विग्रह के अनुसार) बहुव्रीहि समास मानकर अति (खूब) व्रीहि है जिसमें वह, ढेर सारे धान्य-अनाजबाला - ऐसा अर्थ मिलता है।)

(स्त्रीलिंग) पर्वर्गरचिता मूर्तिः ‘प’ वर्ग (अर्थात् प, फ, ब, भ और म वर्ण) के द्वारा रची गई मूर्ति यहाँ श्लोक के पूर्वार्द्ध में जो शब्द प्रयोग है, उसमें प-वर्ग के वर्णों से प्रारम्भ होने वाले शब्दों (जैसे कि - पिनाक-फणि-बालेन्दु-भस्म-मन्दाकिनीयुता) का प्रयोग करके भक्त अपने मन में ईश्वर की एक मूर्ति ‘छवि’ बनाता है अपर्वग्नप्रदा अपर्वग अर्थात् मुक्ति-मोक्ष और प्रदा अर्थात् देनेवाली, मुक्ति देनेवाली (दूसरी तरह से देखा जाए तो श्लोक के पूर्वार्द्ध में जिस मूर्ति की कल्पना की गई है वह ‘प’ वर्ग रचित है। अब इस ‘प’ वर्ग रचित मूर्ति अपर्वग - वर्ग बिना की कैसे होगी ? तब कहा गया है कि - अपर्वग अर्थात् मुक्ति इस अर्थ को समझते हुए यहाँ मुक्ति माँगी जा रही है। यहाँ विरोध समझ में आ रहा है। परन्तु अपर्वग = समझते ही विरोध दूर हो जाता है। लङ्घिता लाँघी नहीं गानसरस्वती गान रूपी सरस्वती गंगा, सरस्वती नामक प्रसिद्ध नदियाँ त्वरिता त्वरित जल्दी से, खूब गति से

(नपुंसकलिंग) अकार्यम् न करने जैसा नखलु नाखून काटने का साधन (न और खलु - इस तरह अलग करके भी अर्थ करना है। न अर्थात् नहीं, खलु अर्थात् निश्चित रूप से) (यह खलु अव्यय कभी-कभी वाक्य में कोई अर्थ नहीं बताता। वह मात्र वाक्य में अलंकार के रूप में, वाक्य की शोभा बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है।)

सर्वनाम : कस्य किसका का (स्त्री.) कौन

विशेषण : पिनाक-फणि-बालेन्दु-भस्म-मन्दाकिनीयुता पिनाक-धनुष, फणी-नाग, बालेन्दु-बाल चन्द्र, भस्म-राख, मंदाकिनी-गंगा-इन (प, फ, ब, भ और म इन पाँच वर्णों से प्रारम्भ होने वाला) पदार्थों से युक्त, धनुष्य इत्यादि वाली (‘प’ वर्ग रचित मूर्ति का विशेषण) उपादेयम् ग्रहण करने योग्य, स्वीकार करने लायक हेयम् छोड़ देने लायक, त्यागने योग्य अधिगततत्त्वः जिसका रहस्य जान लिया है वह, जिसने तत्व प्राप्त कर लिया है वह कीदृशी कैसी, किसकी तरह त्वरिता शीघ्र, तेज

अव्यय : अनन्तरम् बाद में, तदुपरान्त खलु निश्चित, निश्चय ही इति ऐसा ही

समास : पिनाक-फणि-बालेन्दु-भस्म-मन्दाकिनीयुता (पिनाकः च फणी च बालेन्दुः च भस्म च मन्दाकिनी च इति पिनाक-फणि-बालेन्दु-भस्म-मन्दाकिन्यः (इतरेतर द्वन्द्व), पिनाक-फणि-बालेन्दु-भस्म-मन्दाकिनीभिः युता - तृतीया तत्पुरुष)। पर्वर्गरचितामूर्तिः (पर्वर्गेण रचिता पर्वर्गरचिता (तृतीया तत्पुरुष), पर्वर्गरचिता चासौ मूर्तिः - कर्मधारय)। गुरुवचनम् (गुरोः वचनम् - षष्ठी तत्पुरुष)। अकार्यम् (न कार्यम् - न तत्पुरुष)। अधिगततत्त्वः (अधिगतं तत्त्वं येन सः - बहुव्रीहि)। शिष्यहिताय (शिष्यस्य हितम्, तस्मै - षष्ठी तत्पुरुष)। कमललोचने (कमले इव लोचने यस्याः सा बहुव्रीहि)। नखलु (नखं लुनाति (लुनीते) - उपपद तत्पुरुष)। फलाग्रे (फलस्य अग्रम्, तस्मिन् - षष्ठी तत्पुरुष)। अकारादिसकारान्तम् (अकारः आदिः यस्य तत्, अकारादि - बहुव्रीहि)। सकारः अन्ते यस्य तत्, सकारान्तम् - बहुव्रीहि। अकारादि च सकारान्तं च - समाहार द्वन्द्व)। गानसरस्वती (गानस्य सरस्वती - षष्ठी तत्पुरुष)।

क्रियापद : प्रथम गण (परस्मैपदी) वह (वहति) वहन करना, एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना

विशेष

1. शब्दार्थ : अपूर्वः पूर्व (पहले) में अर्थात् पहले कभी न हुआ हो वह **दृष्टः**: देखा हुआ **कान्तः**: प्रिय, पसंदीदा, जिसकी कामना की जाए वह **कमललोचने** हे कमल के समान नेत्रों वाले **नियोजितः**: संलग्न हुए, लगाया, योजित किया **लङ्घिता** उल्लंघन किया, पार, लांघ दिया **अकारादि-सकारान्तम्** आदि में 'अ'कार (अ) अंत में स-कार (स) हो, तो (अनानास नामक फल के संदर्भ में यह कथन है) **मद्गेहे** मेरे घर में **स्याम्** होना, (बनना) बनू **विजानाति** जानते हैं।

(प्रस्तुत पाठ में विविध प्रकार के पद्यों और श्लोकों का संग्रह है। प्रथम श्लोक में शाब्दिक चमत्कार है। प-वर्ग की मूर्ति (के पास) से अपवर्ग की कामना की गई है। द्वितीय श्लोक में प्रश्न और उत्तर है। प्रथम चरण में **भगवन् किमुपादेयम्** प्रश्न है और उसका उत्तर **गुरुवचनम्** है। इसी तरह **हेयमपि च किम्** यह प्रश्न है और उसका उत्तर **अकार्यम्** है। इसके बाद तीसरा और अन्तिम प्रश्न है **को गुरुः** और उसका उत्तर है **अधिगततत्त्वः, शिष्यहिताय उद्यतः सततम्**, तृतीय श्लोक में (पहेलिका) पहेलियाँ हैं और **अशोक** शब्द को ध्यान में रखकर पहेलियाँ पूछी गई हैं। चतुर्थ श्लोक रहस्यात्मक है। उसमें प्रयोग किए गए **शस्त्रं न खलु** पदों को दो तरह से पढ़ना चाहिए 1. **शस्त्रं न खलु**। और 2. **शस्त्रं न खलु**। प्रथमानुसार पढ़ने में समस्या उत्पन्न होती है जबकि दूसरे के अनुसार पढ़ने में कथन का रहस्य स्पष्ट होता है। पाँचवें श्लोक में पहेली प्रश्न है और उसका उत्तर अनानास है। छठे श्लोक में शाब्दिक चमत्कार है। श्लोक के दूसरे और चौथे चरण में अक्षर समान हैं। परन्तु उन अक्षरों को दो तरह से जोड़कर दो अलग-अलग अर्थ लिखना और समझना है। यथा 1. **कैलासं न गं गानसरस्वती**। और 2. **कैलासं न गङ्गा न सरस्वती**। सातवें श्लोक में प्रथम तीन चरण में तीन प्रश्न हैं और चौथे चरण में उन प्रश्नों के क्रमशः उत्तर दिए गए हैं। अन्तिम और आठवें श्लोक में समास के प्रकारों के नाम का प्रयोग करके एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के पास कुछ प्राप्त करने की प्रार्थना करता है)

2. सन्धि : मूर्तिरपवर्गप्रदास्तु (मूर्तिः अपवर्गप्रदा अस्तु)। को गुरुरधिगततत्त्वः (कः गुरुः अधिगततत्त्वः)। शिष्यहितायोद्यतः (शिष्यहिताय उद्यतः)। अपूर्वोऽयम् (अपूर्वः अयम्)। शोऽन्तरं यो विजानाति स विद्वानात्र (शः अन्तरम् यः विजानाति सः विद्वान् न अत्र)। तदेव (तत् एव)। पितुराज्ञा (पितुः आज्ञा)। वृक्षस्याग्रे (वृक्षस्य अग्रे)। वृक्ष एव (वृक्षः एव)। यो जानाति (यः जानाति)। स पण्डितः (सः पण्डितः)। पुत्रो गङ्गा (पुत्रः गङ्गा)। वास्ति (वा अस्ति)। द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहम् (द्वन्द्वः द्विगुः अपि च अहम्)।

स्वाध्याय

1. विकल्पेभ्यः समुचितम् उत्तरं चिनुत ।

(1) कस्य मूर्तिः पर्वारचिता अस्ति ?

- (क) कृष्णस्य (ख) रामस्य (ग) शिवस्य (घ) विष्णोः

(2) किम् उपादेयम् अस्ति ?

- (क) कार्यम् (ख) अकार्यम् (ग) गुरुवचनम् (घ) मित्रवचनम्

(3) यः शिष्यस्य उद्यतः सः गुरुः ?

- (क) हिताय (ख) सुखाय (ग) धनाय (घ) रक्षणाय

(4) का नदी त्वरिता वहति ?

- (क) गङ्गा (ख) यमुना (ग) सरस्वती (घ) नर्मदा

- (5) कर्मणा पुरुषः भवति ।

(क) द्विगुः (ख) तत्पुरुषः (ग) द्वन्द्वः (घ) बहुव्रीहिः

(6) मदगेहे नित्यं किं वर्तते ?

(क) अव्ययीभावः (ख) बहुव्रीहिः (ग) द्विगुः (घ) द्वन्द्वः

(7) तृतीयाविभक्तेः रूपं किम् ?

(क) वः (ख) मया (ग) द्विगुः (घ) कदा

(8) विध्यर्थकृदन्तस्य उदाहरणं किम् ?

(क) कृतवान् (ख) दृष्टवा (ग) रचिता (घ) कर्तव्यम्

२. एकेन वाक्येन संस्कृतभाषयाम् उत्तरत ।

- (1) हेयं किम् अस्ति ?
(2) का कैलासं नगं नयति ?
(3) पितृः का आज्ञा ?

३. रेखांडितानां पदानां स्थाने प्रकोष्ठात् पदं चित्वा प्रश्नवाक्यं रचयत् ।

- (का, किम्, केन, कस्य)

 - (1) युधिष्ठिरः धर्मस्य पुत्रः।
 - (2) गङ्गा कैलासं न नयति।
 - (3) वक्षस्याग्रे फलं दष्टम्।

4. सन्धिविच्छेदं करुत ।

- (1) अपर्वग्नप्रदास्तु
 (2) अपूर्वोऽयम्
 (3) पितुराजा
 (4) द्विग्रापि

५. समासप्रकारं लिखत ।

- | | | | |
|----------------|-------|---------------|-------|
| (1) गुरुवचनम् | | (2) फलाग्रे | |
| (3) गानसरस्वती | | (4) बहव्रीहिः | |

६. शब्दरूपाणां परिचयं कारयत ।

- (1) हिताय
(2) हंसस्य
(3) मया
(4) कमललोचने

7. मातृभाष्या संक्षिप्तं टिप्पणं लिखत ।

- (1) अपवर्गप्रदा शिव की मूर्ति प-वर्ग से कैसे रची गई ?
- (2) गुरु कैसा होना चाहिए ?
- (3) कोई भी व्यक्ति बहुत्रीहि कैसे बन सकता है ?

8. मातृभाष्याम् अर्थविस्तारं कुरुत

- (1) भगवन् किमुपादेयं गुरुवचनम् हेयमपि च किमकार्यम् ।
को गुरुरधिगततत्त्वः; शिष्यहितायोद्यतः सततम् ॥
- (2) यथा नयति कैलासं नगं गानसरस्वती ।
तथा नयति कैलासं न गङ्गा न सरस्वती ॥

प्रवृत्ति

- पाठ में आने वाली पहेली के समान कोई एक अन्य पहेली ढूँढ़कर लिखिए।
- शब्द को अलग-अलग तरह से अलग करने पर दो अर्थ प्राप्त होते हैं, इसी तरह अलग-अलग भाषा के तीन शब्द ढूँढ़िए और उनके अर्थ लिखिए।



19. सत्यं मयूरः

संस्कृत रूपक के दस प्रकार हैं। उनमें से एक प्रकार प्रहसन है। ये प्रहसन एकांकी होते हैं और उनकी कथावस्तु एक दिन जितनी मर्यादित होती है। संस्कृत साहित्य में ऐसे जो अनेक प्रहसन लिखे गए हैं, उनमें सबसे अधिक प्रसिद्धि 'भगवदज्जुकीयम्' नामक प्रहसन को मिली है। कुछ विद्वानों के मतानुसार इसके रचयिता बोधायन नामक कवि हैं, जबकि कुछ विद्वान इस रचना को बोधायन की नहीं, बल्कि किसी अज्ञात कवि की मानते हैं। इसका रचनाकाल लगभग ई.स. की चौथी शताब्दी है। प्रस्तुत नाट्यांश इसी 'भगवदज्जुकीयम्' प्रहसन में से संपादित करके लिया गया है।

गरीब परिवार में जन्म लेने वाला शांडिल्य सरलता से खाने को मिल जाएगा, ऐसी भावना से घर छोड़ देता है और बौद्ध साधु बन जाता है। परन्तु यहाँ तो बार-बार उपवास करना पड़ता था, जिससे वह शांडिल्य बौद्ध साधु का वेश छोड़कर एक दूसरे पहुँचे हुए योगी का शिष्य बन जाता है। यहाँ भी उसका ध्यान खाने में ही रहता है, परन्तु उसके ये गुरु हमेशा पढ़ने के लिए ही कहते हैं। रोज भिक्षा लेने के लिए नगर में आने वाले ये गुरु-शिष्य एक दिन समय से पहले नगर में आ गए। समय का महत्व समझने वाले गुरु अपने शिष्य को इस समय दरम्यान रास्ते में आए बगीचे में बैठकर थोड़ा पढ़ने के लिए कहते हैं। दोनों लोग बगीचे में प्रवेश करते हैं, उसी समय का दृश्य इस नाट्यांश में है।

शांडिल्य की बहानाबाजी हास्य उत्पन्न करती है। इस संवाद पर से इस बात का ख्याल आता है कि बचपन में माता की कही बातों का कितना गंभीर प्रभाव मनुष्य के जीवन पर पड़ता है। मनुष्य चाहे जितना बड़ा हो जाए तो भी माता द्वारा कही बातों से उसमें जो संस्कार पड़ जाते हैं, वे दूर नहीं हो सकते हैं। साथ ही विद्याध्ययन किसलिए करना चाहिए इस प्रश्न का उत्तर भी यहाँ आने वाले संवादों से मिलता है।

शाणिडल्यः - भो भगवन् ! इदमुद्यानम्।

परिद्राजकः - प्रविश अग्रतः।

शाणिडल्यः - भगवान् एव पुरतः प्रविशतु । अहं पृष्ठतः प्रविशामि ।

परिद्राजकः - किमर्थम्।

शाणिडल्यः - पौराणिक्याः मम मातुः श्रुतम् अशोकपल्लवान्तरनिरुद्धो व्याघ्रः प्रतिवसति । तत् भगवानेव पुरतः प्रविशतु अहं पृष्ठतः प्रविशामि ।



परिव्राजकः - बाढम्। (प्रविशति।)

(ततः प्रविशति शाण्डल्यः।)

शाण्डल्यः - अविहा ! व्याघ्रेण गृहीतोऽस्मि। मोचयथ मां व्याघ्रमुखात्। अनाथ इव व्याघ्रेण खादितोऽस्मि। इदं खलु रुधिरं प्रस्त्रवति कण्ठात्।

परिव्राजकः - शाण्डल्य ! न भेतव्यं, न भेतव्यम्। मयूरः खलु एषः।

शाण्डल्यः - सत्यं मयूरः।

परिव्राजकः - अथ किम्। सत्यं मयूरः।

शाण्डल्यः - यदि मयूरः उद्धाटयामि अक्षिणी।

परिव्राजकः - छन्दतः।

शाण्डल्यः - अविधा ! दास्याः पुत्रो व्याघ्रो मद्द्वयेन मयूररूपं गृहीत्वा पलायते। ही ही ! चम्पक-कदम्ब-सप्तपर्ण-चन्दन-तगर-खदिर-कदलीसमवकीर्ण मालती-लता-मण्डप-मण्डितं सुखावहमहो रमणीयं खलु इदम् उद्यानम्।

परिव्राजकः - मूर्ख ! क्षणे क्षणे क्षीयमाणे शरीरे किं ते रमणीयम्। आगच्छ वत्स ! पठ तावत्।

शाण्डल्यः - न तावत् पठिष्यामि।

परिव्राजकः - किमर्थम् ?

शाण्डल्यः - पठनस्य तावत् अर्थः ज्ञातुम् इच्छामि।

परिव्राजकः - पठितपाठैः अपि कालान्तरविज्ञेया भवन्ति पठनार्थाः। तस्मात् पठ तावत्।

शाण्डल्यः - पठनेन किं भविष्यति ?

परिव्राजकः - शृणु - पठनेन विना न प्राप्यते विद्या।

न विद्यया विना सौख्यं नराणां जायते ध्रुवम्।

अतो धर्मार्थमोक्षेभ्यो विद्याभ्यासं समाचरेत्॥

टिप्पणी

संज्ञा : (पुल्लिंग) **शाण्डल्यः** इस नाम का शिष्य व्याघ्रः बाघ मयूरः मोर

(स्त्रीलिंग) **पौराणिकीः** पुराणों का अध्ययन करने वाली, पुराण को जानने वाली

(नपुंसकलिंग) **उद्यानम्** उपवन, बाग **रुधिरम्** लहू, रक्त

विशेषण : **सुखावहम् रमणीयम् (उद्यानम्)** सुख का वहन करने वाला, पसंद आए वैसा - आनन्दित कर दे ऐसा बाग **क्षीणमाणे (शरीरे)** दुर्बल होते शरीर में, क्षीण होते शरीर में

अव्यय : **अग्रतः** आगे से **पुरतः** सामने से **पृष्ठतः** पीछे से **अविहा** दुःख मिश्रित आश्चर्य को व्यक्त करने वाला अव्यय, हाय रे ! **अथ किम्** हाँ तो, तो क्या **छन्दतः** इच्छा के अनुसार **अविधा** दुःख मिश्रित आश्चर्य को व्यक्त करने वाला (शब्द) अव्यय, हाय रे ! **तावत्** उतना, उसके अनुसार

समास : अशोकपल्लवान्तरनिरुद्धः (अशोकस्य पल्लवः (अशोकपल्लवः, षष्ठी तत्पुरुष), अशोकपल्लवस्य अन्तरम् (अशोकपल्लवान्तरम्, षष्ठी तत्पुरुष), अशोकपल्लवान्तरे निरुद्धः - सप्तमी तत्पुरुष)। व्याघ्रमुखात् (व्याघ्रस्य मुखम्, तस्मात् - षष्ठी तत्पुरुष))। मद्द्ययेन (मत् भयम्, तेन - पञ्चमी तत्पुरुष)। मयूररूपम् (मयूरस्य रूपम् - षष्ठी तत्पुरुष)। चम्पक-कदम्ब-सप्तपर्ण-चन्दन-तगर-खदिर-कदलीसमवकीर्णम् (चम्पकः च कदम्बः च सप्तपर्णः च चन्दनः च तगरः च खदिरः च कदली च चम्पक-कदम्ब-सप्तपर्ण-चन्दन-तगर-खदिर-कदल्यः (इतरेतर द्वन्द्व), ताभिः समवकीर्णम् - तृतीया तत्पुरुष)। मालती-लता-मण्डप-मण्डितम् मालतीलतायाः मण्डपम् (-मालतीलतामण्डपम्, षष्ठी तत्पुरुष), मालतीलतामण्डपेन मण्डितम् - तृतीया तत्पुरुष)। पठितपाठैः (पठितः पाठः येन - पठितपाठः; तैः - बहुव्रीहि)। कालान्तरविज्ञेया (कालस्य अन्तरम् (कालान्तरम्, षष्ठी तत्पुरुष), कालान्तरे विज्ञेया - सप्तमी तत्पुरुष)। धर्मार्थमोक्षेभ्यः (धर्मः च अर्थः च मोक्षः च - धर्मार्थमोक्षाः, तेऽयः - इतरेतर द्वन्द्व)। विद्याभ्यासः (विद्यायाः अभ्यासः - षष्ठी तत्पुरुष)।

कृदन्तः (क.भू.कृ.) गृहीत ग्रहण किया, पकड़ा, लिया खादित खाया हुआ, खा लिया (वि.कृ) भेतव्यम् डरना चाहिए, डरने योग्य रमणीयम् सुन्दर, आनन्दित करने वाला

क्रियापदः प्रथम गण (परस्मैपदी) आ + गम् > गच्छ (आगच्छति) प्रवेश करना, अन्दर आना पद् (पठति) पढ़ना, पाठ करना इष् > इच्छ (इच्छति) चाहना, इच्छा करना

छठा गण : (परस्मैपदी) प्र + विश् (प्रविशति) प्रवेश करना

विशेष

1. शब्दार्थः अशोकपल्लवान्तरनिरुद्धो व्याघ्रः: अशोक के पत्तों के पीछे टिक कर, रुका हुआ-छिपा हुआ बाघ प्रतिवसतीति रहता है ऐसा, निवास करता है ऐसा तत् इसलिए बाढ़म् ठीक है व्याघ्रेण गृहीतोऽस्मि बाघ ने मुझे पकड़ लिया है, बाघ के द्वारा मैं पकड़ लिया गया हूँ मोचयथ मां व्याघ्रमुखात् बाघ के मुख में से मुझे छुड़वाइए अनाथ इव अनाथ की तरह व्याघ्रेण खादितोऽस्मि शेर ने मुझे खा लिया है, बाघ के द्वारा मैं खा लिया गया हूँ रुधिरं प्रस्तवति रक्त बह रहा है कण्ठात् गले में से, कंठ में से मयूरः खल्वेषः यह तो सच में मोर है सत्यं मयूरः सच में मोर है ? यदि मयूरः उद्घाटयाम्यक्षिणी यदि मोर ही है तो मैं अपनी आँखें खोलता हूँ दास्याः पुत्रो व्याघ्रः दासी का पुत्र ऐसा बाघ (संस्कृत भाषा में दास्याः पुत्रः - इस शब्द का प्रयोग किसी व्यक्ति की ओर हेय भावना व्यक्त करने के लिए किया जाता है।) मद्द्ययेन मेरे डर से, मेरे भय से मयूररूपं गृहीत्वा मोर का रूप धारण करके पलायते भाग जाता है, भाग गया ही ही ! ओह हो चम्पक-कदम्ब-सप्तपर्ण-चन्दन-तगर-खदिर-कदलीसमवकीर्णम् चम्पक, कदम, सप्तपर्णी, चन्दन, तगर, खैर और केले से भरे हुए मालती-लता-मण्डप-मण्डितम् मालती की लताओं से सुशोभित मंडप मूर्खं अरे मूर्खं क्षणे क्षणे क्षीयमाणे शरीरे क्षणं क्षीण होने वाले शरीर में, जब क्षण-क्षण में शरीर क्षीण हो रहा है तब किं ते रमणीयम् तुम्हरे लिए क्या रमणीय होगा ? न तावत् पठिष्यामि तब तो मैं नहीं पढ़ूँगा ज्ञातुम् इच्छामि जानने का इच्छुक हूँ, जिज्ञासु हूँ पठितपाठैः अपि पाठ को जो लोग पढ़ चुके हैं, उन लोगों को भी कालान्तरविज्ञेया: समय आने पर जानकारी में आएँ ऐसे पठनार्थाः पढ़ने का अर्थ तस्मात् पठ तावत् इस लिए तुम पढ़ो पठनेन किं भविष्यति पढ़ने से क्या होगा ? पठनेन विना पढ़े बिना न प्राप्यते विद्या विद्या प्राप्त नहीं होती विद्यया विना विद्या बिना सौख्यम् सुख का भाव, सुखी ध्रुवम् निश्चित

2. सत्थिः अशोकपल्लवान्तरनिरुद्धो व्याघ्रः (अशोकपल्लवान्तरनिरुद्धः व्याघ्रः)। प्रतिवसतीति (प्रतिवसति इति)। गृहीतोऽस्मि (गृहीतः अस्मि)। अनाथ इव (अनाथः इव)। खादितोऽस्मि (खादितः अस्मि)। पुत्रो व्याघ्रो मद्द्ययेन (पुत्रः व्याघ्रः मद्द्ययेन)। अतो धर्मार्थमोक्षेभ्यो विद्याभ्यासम् (अतः धर्मार्थमोक्षेभ्यः विद्याभ्यासम्)।

स्वाध्याय

१. अधोलिखितेभ्यः विकल्पेभ्यः समुचितम् उत्तरं चिनुत ।

२. एकवाक्येन संस्कृतभाष्याम् उत्तरत ।

- (1) कुत्र निरुद्धः व्याघ्रः उद्याने प्रतिवसति ?
(2) उद्यानं कः पुरतः प्रविशति ?
(3) शाण्डल्यः कं व्याघ्रं मत्वा आक्रोशति ?
(4) विद्यां विना मनव्याणां किं न जायते ?

३. अधोलिखितानां कदन्तानां प्रकारं लिखत ।

- | | | | |
|--------------|-------|---------------|-------|
| (1) श्रुतम् | | (2) निरुद्धः | |
| (3) भेतव्यम् | | (4) विज्ञेयाः | |
| (5) रमणीयम् | | | |

सत्यं मयरः

4. समासप्रकारं लिखत ।

- | | | | |
|-------------------|-------|------------------------|-------|
| (1) व्याघ्रमुखात् | | (2) धर्मार्थमोक्षेभ्यः | |
| (3) पठितपाठैः | | (4) मयूररूपम् | |
| (5) पठनार्थाः | | | |

5. वचनानुसारं धातुरूपैः रिक्तस्थानानि पूरयत ।

- | | | |
|--------------|-------|---------------|
| (1) प्रविश | | |
| (2) | | प्रस्त्रवन्ति |
| (3) पठ | पठतम् | |
| (4) समाचरेत् | | |

6. मातृभाषयाम् उत्तराणि लिखत ।

- (1) शांडिल्य उद्यान में प्रवेश करते समय क्यों भय का अनुभव करता है ?
- (2) बाघ ने पकड़ लिया है यह मानकर शांडिल्य क्या चिल्लाता है ?
- (3) शांडिल्य द्वारा किए गए उद्यान का वर्णन लिखिए ?
- (4) पढ़ने का अर्थ कौन कब समझ सकता है ?
- (5) विद्याध्यास क्यों करना चाहिए ?

प्रवृत्ति

- संस्कृत भाषा में इस प्रकार के अन्य प्रहसन और उनके रचयिता के नाम की सूची बनाइए।
- अपने शहर या गाँव के बगीचे में जाइए और संक्षिप्त में उसके विषय में लिखिए।





20. तथैव तिष्ठति



जिस तरह प्रत्येक फल का अपना विशिष्ट रस होता है, उसी तरह संस्कृत के प्रत्येक कवि द्वारा रचित हर एक पद्य में अपना विशिष्ट रस होता है। फिर भी हमारी व्यक्तिगत रुचि के कारण किसी फल को अधिक पसंद करते हैं। यह व्यवहार जिस तरह किसी फल के महत्व को हानि नहीं पहुँचाता, उसी तरह महाकवियों के कुछ पद्य को पसंद करके रसास्वाद करने का भाव प्रस्तुत पाठ में होने से उन कवियों के अन्य पद्यों का महत्व किसी तरह कम नहीं होता है।

इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर यहाँ अलग-अलग कालखंड में हो गए और नाटक, महाकाव्य, कथा, आख्यायिका जैसे विविध साहित्य स्वरूप की काव्यरचना करके साहित्यजगत् में अमर हो गए छः महाकवियों की एक-एक रचना पसंद करके यहाँ प्रस्तुत की गई है।

पहला श्लोक महाकवि भास के एकांकी 'कर्णभार' में से लिया गया है। उसमें दान और होम की महिमा दर्शाई गई है। दूसरा श्लोक महाकवि कालिदास के 'मालविकाग्निमित्र' में से है, जिसमें दूसरे के बहकावे में आए बिना अपनी बुद्धि से अच्छे-बुरे का विचार करके निश्चय करने के लिए कहा गया है। भवभूति के 'उत्तररामचरित' में से लिए गए तीसरे श्लोक में महापुरुषों के मन की जिस तरह से लाक्षणिकता का वर्णन किया गया है, उससे पता चलता है कि प्रत्येक महापुरुष का मन वज्र से भी कठोर और फूल से भी कोमल होता है। चौथा श्लोक गद्यकार बाण की प्रसिद्ध रचना है, उसमें दुष्ट मनुष्य के स्वभाव की वास्तविकता का वर्णन है। पाँचवाँ श्लोक नाटककार शूद्रक के 'मृच्छकटिक' में से पसंद किया गया है। उसमें दरिद्र मनुष्य के हृदय का दयाजनक दुःख वर्णित है। अंतिम श्लोक रविगुप्त नामक कवि की रचना है। जिसमें सज्जन की प्रशंसा की गई है। इस वर्णन में सूचित वास्तविकता आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। वह मनुष्य जीवन का हिस्सा बनना चाहिए, तभी काव्यशिक्षा सफल हो सकती है।

शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्

सुबद्धमूलाः निपतन्ति पादपाः।

जलं जलस्थानगतं च शुष्यति

हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति ॥ 1 ॥ - भासस्य ॥

पुराणमित्येव न साधु सर्वं

न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम् ।

सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते

मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः ॥ 2 ॥ - कालिदासस्य ॥

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि ।

लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ॥ 3 ॥ - भवभूतेः ॥

अन्यस्माल्लब्धपदो नीचः प्रायेण दुःसहो भवति ।

रविरपि न दहति तादृग् यादृग् दहति वालुकानिकरः ॥ 4 ॥ - बाणस्य ॥

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते
 घनाञ्चकरेष्विव दीपदर्शनम्।
 सुखातु यो याति नरो दरिद्रतां
 धृतः शरीरेण मृतः स जीवति ॥ ५ ॥ - शूद्रकस्य ॥

सुजनो न याति वैरं परहितनिरतो विनाशकालेऽपि ।
 छेदेऽपि चन्दनतरुः सुरभयति मुखं कुठारस्य ॥ ६ ॥ - रविगुप्तस्य ॥

टिप्पणी

संज्ञा : (पुल्लिंग) **क्षयः**: विनाश, नाश **पादपः**: वृक्ष, पेड़ (पाद अर्थात् पैर से-मूल से पानी पीता है, अतः वृक्ष पादप कहा जाता है) **मूढः**: मूर्ख, कम बुद्धिवाला **रविः**: सूर्य **बालुकानिकरः**: बालू का ढेर **सुजनः**: सज्जन, अच्छे व्यक्ति **चन्दनतरुः**: चन्दन का वृक्ष

(स्त्रीलिंग) शिक्षा शिक्षण, शिक्षा **दरिद्रता** गरीबी, दारिद्र्य

(नपुंसकलिंग) **मुखम्** नोंक, धार, अग्रभाग **पदम्** = स्थान, पदवी

सर्वनामः : अन्यतरत् (नपुं.) दोनों में से कोई एक **अन्यः** (पुं.) दूसरा, पराया व्यक्ति

विशेषणः **सुबद्धमूलाः** (**पादपाः**) अच्छी तरह से फैली हुई जड़वाले (वृक्ष) **जलस्थानगतम्** (**जलम्**) पानी का स्थान (तालाब या समुद्र) में रहने वाला (पानी) **पुराणम्** (**काव्यम्**) प्राचीन-पुराना (काव्य) **नवम्** (**काव्यम्**) नया, ताजा (तुरन्त रचा गया काव्य) **लब्ध्यपदः** (**नीचः**) जिसने पद प्राप्त किया है ऐसा (नीच व्यक्ति, गुणहीन व्यक्ति) **नीचः** नीच, दुष्ट मानव **हुतम्** (यज्ञ की अग्नि में) होमा हुआ **दत्तम्** (किसी जरूरतमंद इंसान को) दिया हुआ **पुराणम्** पुराना, प्राचीन

अव्ययः : तथैव वैसे का वैसा, जैसा है वैसा ही **प्रायेण** अधिकतर

समासः : कालपर्ययात् (कालस्य पर्ययः; तस्मात् - षष्ठी तत्पुरुष) | **सुबद्धमूलाः** (सुबद्धानि मूलानि येषां ते - बहुब्रीहि) | **जलस्थानगतम्** (जलस्य स्थानम् - जलस्थानम्, षष्ठी तत्पुरुष), जलस्थानं गतम् - द्वितीया तत्पुरुष) | पर-प्रत्यय-नेय-बुद्धिः (परेषां प्रत्ययः (परप्रत्ययः, षष्ठी तत्पुरुष), परप्रत्ययेन नेया (-परप्रत्ययनेया, तृतीया तत्पुरुष), परप्रत्ययनेया बुद्धिः यस्य सः - बहुब्रीहि) | लोकोत्तराणाम् (लोकेभ्यः उत्तरा; तेषाम् - पञ्चमी तत्पुरुष) | **लब्ध्यपदः** (लब्धं पदं येन सः - बहुब्रीहि) | **वालुकानिकरः**: (वालुकानां निकरः - षष्ठी तत्पुरुष) | **घनाञ्चकरेषु** (घनः चासौ अन्धकारः; तेषु - कर्मधारय) | **दीपदर्शनम्** (दीपस्य दर्शनम् - षष्ठी तत्पुरुष) | **परहितनिरतः** (परेभ्यः हितम् (परहितम्, चतुर्थी तत्पुरुष), परहितेषु निरतः - सप्तमी तत्पुरुष) | **विनाशकाले** (विनाशस्य कालः; तस्मिन् - षष्ठी तत्पुरुष) | **चन्दनतरुः**: (चन्दनस्य तरुः - षष्ठी तत्पुरुष) |

कृदत्तः (**क.भू.कृ.**) **धृतः**: धारण किया हुआ **मृतः**: मरा हुआ (**सं.भू.कृ.**) **परीक्ष्य** जाँचकर, परीक्षण करके, परीक्षा करके **अनुभूय** अनुभव करके (**हे.कृ.**) **विज्ञातुम्** जानने के लिए

क्रियापदः : प्रथम गण (परस्पैपदी) नि + पत् (निपत्ति) नीचे गिरना, गिरना दह (दहति) जलना **जीव्** (**जीवति**) जीना, जीवित रहना

(आत्मनेपदी) **भज्** (**भजते**) भजना (ईश्वर की भक्ति करना) **शुभ्** (**शोभते**) सुशोभित होना

विशेष

1. शब्दार्थः : कालपर्ययात् समय के बदलाव से **निपत्तनि** नीचे गिर जाते हैं **साधु** योग्य, अच्छा **अवद्यम्** निन्दा न की जा सके ऐसा **पर-प्रत्यय-नेय-बुद्धिः** पर अर्थात् दूसरे के प्रत्यय अर्थात् ज्ञान से, विश्वास से नेय संचालित

बुद्धिवाला लोकोत्तराणाम् लोक-संसार से ऊपर रहने वाले (महापुरुषों का) सामान्य लोगों से उत्तम कक्षा के व्यक्ति विज्ञातुम् अर्हति जाना जा सकता है, जानने योग्य है अन्यस्मात् दूसरे व्यक्ति के पास से यादृग् दहति जैसे जलता है घनान्धकारेषु गहरे अंधकार में दीपदर्शनम् दीपक का दर्शन परहितनिरतः परहित में संलग्न, दूसरों के हित में रत छेदे अपि काट दिया जाए तो भी सुरभयति सुगंधयुक्त बनाता है कुठारस्य कुल्हाड़ी (अर्थात् लकड़ी काटने का औजार) को

2. सन्धि : पुराणमित्येव (पुराणम् इति एव)। न चापि (न च अपि)। नवमित्यवद्यम् (नवम् इति अवद्यम्)। वज्रादपि (वज्रात् अपि)। कुसुमादपि (कुसुमात् अपि)। को नु (कः नु)। अन्यस्माल्लब्धपदो नीचः (अन्यस्मात् लब्धपदः नीचः)। दुःसहो भवति (दुःसहः भवति)। रविरपि (रविः अपि)। दुःखान्यनुभूय (दुःखानि अनुभूय)। घनान्धकारेष्विव (घनान्धकारेषु इव)। सुखात् (सुखात् तु)। यो याति (यः याति)। नरो दरिद्रताम् (नरः दरिद्रताम्)। सुजनो न (सुजनः न)। परहितनिरतो विनाशकालेऽपि (परहितनिरतः विनाशकाले अपि)। छेदेऽपि (छेदे अपि)।

स्वाध्याय

1. विकल्पेभ्यः समुचितम् उत्तरं चिनुत ।

- (1) शिक्षा कस्मात् कारणात् क्षयं गच्छति ?
- (क) अवस्थापर्ययात् (ख) कालपर्ययात् (ग) बुद्धिपर्ययात् (घ) गुरुपर्ययात्
- (2) सन्तः किं कृत्वा अन्यतरत् भजन्ते ?
- (क) परीक्ष्य (ख) दृष्ट्वा (ग) अनुभूय (घ) विचार्य
- (3) कीदृशः नीचः प्रायेण दुःसहो भवति ?
- (क) लब्धपदः (ख) लब्धधनः (ग) लब्धयशाः (घ) लब्धविद्यः
- (4) दुःखानि अनुभूय किं शोभते ?
- (क) धर्मः (ख) धनम् (ग) विद्या (घ) सुखम्
- (5) सुजनो न याति वैरं विनाशकाले अपि।
- (क) परहितनिरतः (ख) परकर्मनिरतः (ग) परधर्मनिरतः (घ) परहानिनिरतः

2. एकेन वाक्येन संस्कृतभाषयाम् उत्तरत ।

- (1) सुबद्धमूलाः पादपाः कस्मात् कारणात् निपतन्ति ?
- (2) मूढः जनः कीदृशः भवति ?
- (3) लोकोत्तराणां चेतांसि कस्मादपि मृदूनि भवन्ति ?
- (4) सुखं कदा शोभते ?

3. सन्धिविच्छेदं कुरुत ।

- (1) नवमित्यवद्यम्
.....
- (2) कुसुमादपि ।
.....

- (3) अन्यस्माल्लब्धपदो नीचः।
 (4) यो याति ।
 (5) विनाशकालेऽपि ।

4. समासप्रकारं लिखत ।

- | | | | |
|----------------|-------|-------------------|-------|
| (1) सुबद्धमूलः | | (2) लोकोत्तराणाम् | |
| (3) लब्धपदः | | (4) वालुकानिकरः | |
| (5) परहितनिरतः | | | |

5. रिक्तस्थाने विशेष्यानुसारं योग्यं कोष्ठगतं विशेषणपदं लिखत ।

- | | |
|--|-------------|
| (1) पादपाः निपतन्ति । | (सुबद्धमूल) |
| (2) काव्यम् अवद्यं भवति इति न । | (नव) |
| (3) लोकोत्तराणां चेतांसि वज्रादपि भवन्ति । | (कठोर) |
| (4) नीचः प्रायेण भवति । | (दुःसह) |
| (5) सुजनः विनाशकालेऽपि वैरं न याति । | (परहितनिरत) |

6. मातृभाषया संक्षिप्तं टिप्पणं लिखत ।

- (1) मूर्ख और सज्जन का भेद
 (2) नीच व्यक्ति की मानसिकता
 (3) सुजन की सुजनता का स्वरूप

7. अर्थविस्तार कीजिए।

- (1) शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्
 सुबद्धमूलाः निपतन्ति पादपाः।
 जलं जलस्थानगतं च शुष्यति
 हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति ॥
- (2) वज्रादपि कठोरणि मृदूनि कुसुमादपि ।
 लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ॥
- (3) सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते
 घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम्।
 सुखात्तु यो याति नरो दरिद्रतां
 धृतः शरीरेण मृतः स जीवति ॥

प्रवृत्ति

- महाकवि कालिदास के महाकाव्य में से आपकी पसंद का कोई एक पद लिखिए।
- कर्णभार की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।





(1) पुनरावर्तन

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- (1) अंशः क्रीडनकानि क्रीडति ।
- (2) नित्या प्रातःकाले विद्यालयं गच्छति ।
- (3) दिव्यः हस्ते चषकम् आदाय जलं पिबति ।

कक्षा नौ में उपर्युक्त वाक्य-रचनाओं का आप अध्ययन कर चुके हैं। इस प्रकार की वाक्य रचना से आगे की वाक्य रचना पर विचार करें, उससे पहले थोड़ा पुनरावर्तन कर लें।

उपर्युक्त वाक्यों में 1. क्रीडति 2. गच्छति और 3. पिबति – ये तीन क्रियापद हैं। ये क्रियापद क्रमशः क्रीड, गम् > गच्छ और पा > पिब् – प्रथम गण के धातुओं के वर्तमान काल, प्रथम पुरुष (अन्य पुरुष), एक वचन के हैं।

इन क्रियापदों के साथ ‘अंशः’ कर्ताकारक (प्रथमा विभक्ति) और क्रीडनकानि (द्वितीया विभक्ति) कर्मकारक – इस तरह दो कारक पद प्रयुक्त हुए हैं। (इस तरह यहाँ वाक्य में मात्र तीन पद हैं।) दूसरे वाक्य में ‘गच्छति’ क्रियापद के साथ ‘नित्या’ कर्ताकारक (सप्तमी विभक्ति) और ‘विद्यालयम्’ कर्मकारक (द्वितीया विभक्ति) है। (इस तरह यहाँ वाक्य में चार पद हैं) तीसरे वाक्य में ‘पिबति’ क्रियापद के साथ ‘दिव्यः’ कर्ताकारक (प्रथमा विभक्ति) ‘हस्ते’ अधिकरण कारक (सप्तमी विभक्ति) ‘आदाय’ (उपक्रिया) अव्यय पद है। ‘पिबति’ यह मुख्य क्रियापद के कर्मकारक के रूप में ‘चषकम्’ है और इसीलिए वह द्वितीया विभक्ति में प्रयुक्त हुआ है। इसी तरह ‘आदाय’ गौण क्रियापद के कर्मकारक के रूप में ‘जलम्’ है और इसीलिए उसे भी द्वितीया विभक्ति में रखा गया है। (इस तरह यहाँ वाक्य में छः पद हैं।)

इस तरह प्रत्येक क्रिया के साथ उसका कारक परिवार जुड़ा होता है। संक्षेप में कहना हो तो कह सकते हैं कि प्राथमिक स्तर की वाक्यरचना में अधिकांशतः एक क्रियापद और उसके साथ कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण – इनमें से कुछ अथवा सभी कारकपद प्रयुक्त होते हैं। कभी-कभी तो सभी कारक पदों के साथ संबंधवाचक पद भी प्रयुक्त होते हैं। इस तरह, छः कारक पद और उनके साथ के संबंध पद – इन सातों के साथ प्रयुक्त होने वाली सात विभक्तियों के रूप आप कक्षा – 9 में पढ़ चुके हैं।

अब, निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- | | | |
|----------------------------|--------------------------|--------------------------|
| (1) (क) सः वेदं पठति । | (ख) त्वं वेदं पठसि । | (ग) अहं वेदं पठामि । |
| (2) (क) सः वेदम् अपठत् । | (ख) त्वं वेदं अपठः । | (ग) अहं वेदम् अपठम् । |
| (3) (क) सः वेदं पठिष्यति । | (ख) त्वं वेदं पठिष्यसि । | (ग) अहं वेदं पठिष्यामि । |

उपर्युक्त वाक्य समूह में (क) वर्ग के वाक्यों में कर्ता (सः) और कर्म (वेदम्) के रूप में प्रयुक्त पद एक समान हैं। जबकि क्रियापद ‘पठ्’ धातु के होने पर भी पठति, अपठः और पठिष्यति, इस रूप में कुछ भिन्न-भिन्न हैं। ऐसी ही भिन्नता (ख) वर्ग और (ग) वर्ग के वाक्यों में देख सकते हैं। इसका कारण ‘पठ्’ धातु के पीछे प्रयुक्त काल है। इसी प्रकार (क) वर्ग (ख) वर्ग और (ग) वर्ग के वाक्यों में एक समान काल प्रयुक्त होने पर भी पठति, पठसि, और पठामि। इस रूप से उनके रूप भी भिन्न-भिन्न हैं। इसका कारण पुरुषों का परिवर्तन है। यहाँ क्रमशः अन्यपुरुष, मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष प्रयुक्त हुआ है, इसी कारण से रूप भी अलग-अलग हैं। उसी तरह नीचे के दूसरे कुछ वाक्य पढ़िए :

- | | | |
|----------------------------|------------------------|--------------------------|
| (1) (क) सः वेदं पठति । | (ख) तौ वेदं पठतः । | (ग) ते वेदं पठन्ति । |
| (2) (क) सः वेदम् अपठत् । | (ख) तौ वेदं अपठताम् । | (ग) ते वेदम् अपठन् । |
| (3) (क) सः वेदं पठिष्यति । | (ख) तौ वेदं पठिष्यतः । | (ग) ते वेदं पठिष्यन्ति । |

इन वाक्यों में प्रयुक्त सभी क्रियापद ‘पठ्’ धातु के हैं। प्रथम क्रमांक में आए वाक्यों में ‘क’ वर्ग का क्रियापद

अन्यपुरुष एकवचन का है, जबकि 'ख'-वर्ग का क्रियापद अन्य पुरुष का होने के साथ द्विवचन का है। इस तरह यहाँ प्रथम क्रम में स्थित वाक्य काल की दृष्टि से और पुरुष की दृष्टि से एक समान होने पर भी एक दूसरे से भिन्न हैं, इसका कारण क्रियापद में रहा वचन परिवर्तन है।

इस प्रकार के प्रत्येक क्रियापद वाले वाक्य में काल, पुरुष और वचन अनुसार क्रियापद के रूपों में अपेक्षित परिवर्तन होता रहता है। इस परिवर्तन के समय जो नियम काम करते हैं उन नियमों को कक्षा 9 में आप सीख चुके हैं। आप जानते हैं कि संस्कृत भाषा में जब किसी क्रियापद का उपयोग किया जाता है तब सर्वप्रथम तो उस क्रियापद को प्रकट करने वाला धातु जानना पड़ता है और फिर उस धातु में प्रत्यय जोड़ना पड़ता है। ऐसे प्रत्यय को जोड़ते समय 1. काल, 2. पुरुष और 3. वचन-इन तीनों बातों का ध्यान रखना पड़ता है।

उदाहरण स्वरूप 'ऋषि वेद को पढ़ते हैं' इस वाक्य में 'पढ़ते हैं' क्रियापद का संस्कृत में अनुवाद करते समय सर्वप्रथम उस पढ़ने की क्रिया को व्यक्त करने वाला (पठ) धातु जानना होता है और उसके पश्चात् वह किस गण का है, किस काल, पुरुष और वचन में प्रयुक्त हुआ है, इसे जानना पड़ता है। इतनी जानकारी प्राप्त करने के बाद उसके अनुरूप धातुरूप बना करके वाक्य में प्रयोग किया जाता है। जैसे कि यहाँ प्रयुक्त 'पठ' धातु प्रथम गण की है और 1. वर्तमान काल 2. अन्यपुरुष 3. एक वचन है। अतः 'पठ' धातु के साथ प्रथम गण का विकरण प्रत्यय के रूप में 'अ' और 1. वर्तमान काल 2. अन्यपुरुष 3. एक वचन का 'ति' (दोनों एकत्र करे तो 'अति') प्रत्यय जोड़ करके 'पठति' - इस रूप में क्रियापद प्रयुक्त होता है। इसी तरह 'पठ' धातु को ह्यस्तन भूतकाल, मध्यम पुरुष और एक वचन में प्रयोग करना हो, तो 'अपठः'। ऐसा (ह्यस्तन भूतकाल, मध्यम पुरुष और एकवचन का) क्रियापद प्रयुक्त करना पड़ेगा। ठीक इसी तरह 'पठ' धातु को सामान्य भविष्य काल, उत्तम पुरुष और एकवचन में प्रयोग करना हो, तो 'पठिष्यामि'। ऐसा (सामान्य भविष्यकाल, उत्तम पुरुष और एक वचन का) क्रियापद प्रयुक्त करना पड़ता है। इस प्रकार के अलग-अलग काल के रूप भी नवीं कक्षा में आप पढ़ चुके हैं।

(1) क्रियापद परिचय

आइए, अब इतना पुनरावर्तन करने के पश्चात् कुछ नियत धातुओं के आज्ञार्थ (लोट् लकार) और विध्यर्थ (लिङ् लकार) के क्रियापदों का भी अध्ययन करें।

आज्ञार्थ (लोट् लकार)

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- (1) हे बाल ! त्वम् आलस्यं त्यज। (हे बालक ! तू आलस छोड़ दे।)
- (2) हे प्रभो ! काले पर्जन्यः वर्षतु। (हे प्रभु ! (समय होने पर) काल आए तब वर्षा करना।)
- (3) हे बालक ! त्वं शतं जीव। (हे बालक ! तुम सौ वर्ष जिओ।)

उपर्युक्त वाक्यों में सभी रेखांकित पद क्रियापद हैं। ये क्रियापद वर्तमान जैसे किसी काल का अर्थ बताने के लिए नहीं, बल्कि क्रमशः आज्ञा, प्रार्थना और आशीर्वाद के अर्थ को बताने के लिए प्रयुक्त हुए हैं। प्रथम वाक्य (हे बाल ! त्वम् आलस्यं त्यज। हे बालक ! तू आलस छोड़ दे।) में कोई बड़ा व्यक्ति छोटी उम्र के बालक को आज्ञा दे रहा है। द्वितीय वाक्य (हे प्रभो ! काले पर्जन्यः वर्षतु। हे प्रभु ! (समय होने पर) काल आए तब वर्षा करना।) में कोई भक्त भगवान से प्रार्थना कर रहा है। जबकि तृतीय वाक्य (हे बालक ! त्वं शतं जीव। हे बालक ! तुम सौ वर्ष जिओ।) में कोई बड़ा व्यक्ति छोटी उम्र के बालक को आशीर्वाद दे रहा है।

ध्यान रखिए, जिस तरह वर्तमान वगैरह काल का अर्थ कहने के लिए काल, पुरुष और वचन तीनों बातों का ध्यान रखना पड़ता है, उसी तरह आज्ञा वगैरह अर्थ को कहने के लिए अमुक (आज्ञा, प्रार्थना और आशीर्वाद वगैरह जैसा कोई) निश्चित अर्थ, पुरुष और वचन तीनों बातों का ध्यान रखना पड़ता है।

इस तरह संस्कृत भाषा में आज्ञा, प्रार्थना आशीर्वाद वगैरह जैसे अर्थ को कहने के लिए आज्ञार्थ का प्रयोग किया जाता है। इसलिए जब किसी क्रिया के संदर्भ में आज्ञा वगैरह का अर्थ व्यक्त करना हो, तब आज्ञार्थ क्रियापदों का प्रयोग किया जाता है।

(इनमें आज्ञा का अर्थ पहले आने से इन क्रियापदों को आज्ञार्थ (लोट् लकार) के रूप में जाना जाता है।)

अलग-अलग धातुओं के साथ परस्मैपद और आत्मनेपद के आज्ञार्थ (लोट् लकार) के जो मूल प्रत्यय जोड़े जाते हैं, वे इस प्रकार हैं :

आज्ञार्थ (लोट् लकार) (परस्मैपद) के प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम
मध्यम पुरुष	(0) - हि	तम्	त
अन्य पुरुष	तु	ताम्	अन्तु

आज्ञार्थ (लोट् लकार) (आत्मनेपद) के प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	ऐ	आवहै	आमहै
मध्यम पुरुष	स्व	इथाम् (आथाम्)	ध्वम्
अन्य पुरुष	ताम्	इताम् (आताम्)	अन्ताम् (अताम्)

इन मूल प्रत्ययों को दी गई धातु के साथ जोड़ते समय धातु और इन उपर्युक्त प्रत्ययों के बीच दिए गए गण का विकरण प्रत्यय भी जोड़ा होता है। जैसे कि 'खाद् + अ + तु = खादतु'। (कक्षा 9 में आपने सीखा है कि धातुओं के दस गण हैं। गण के अनुसार विकरण प्रत्यय होता है। आपको यहाँ पहला, चौथा, छठा और दसवाँ - इस तरह चार ही गण के धातुओं के रूप सीखने हैं। इसलिए इन चार गण के विकरण प्रत्ययों का ध्यान रखना है। जैसे कि पहला गण 'अ,' चौथा गण 'य,' छठा गण 'अ' और दसवाँ गण 'अय'।)

गण अनुसार धातुओं के रूप निम्नानुसार हैं :

‘पद्’ पढ़ना (पहला गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	पठानि मैं पढ़ूँ।	पठाव हम दोनों पढ़ें।	पठाम हम पढ़ें।
मध्यम पुरुष	पठ तू पढ़े।	पठतम् तुम दोनों पढ़ो।	पठत तुम पढ़ो।
अन्य पुरुष	पठतु वह पढ़े।	पठताम् वे दोनों पढ़ें।	पठन्तु वे पढ़ें।

‘लभ्’ पाना, प्राप्त करना (पहला गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (आत्मनेपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	लभै	लभावहै	लभामहै
मध्यम पुरुष	लभस्व	लभेथाम्	लभध्वम्
अन्य पुरुष	लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्

इसी तरह प्रथम गण के दूसरी धातुओं के रूप समझ लें। (नियत धातुएँ इस तरह हैं - (परस्मैपद) पठ, हस, चल, खेल, खाद्, पा, गम्, भू, दृश्, स्था, वस्, जीव्। (आत्मनेपद) लभ्, भाष्, रम्, वन्द्, मुद्, शुभ्।)

'नृत्' नाचना, नृत्य करना (चौथा गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	नृत्यानि	नृत्याव	नृत्याम्
मध्यम पुरुष	नृत्य	नृत्यतम्	नृत्यत
अन्य पुरुष	नृत्यतु	नृत्यताम्	नृत्यन्तु

'विद्' होना (चौथा गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (आत्मनेपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	विद्यै	विद्यावहै	विद्यामहै
मध्यम पुरुष	विद्यस्व	विद्येथाम्	विद्यध्वम्
अन्य पुरुष	विद्यताम्	विद्येताम्	विद्यन्ताम्

इसीतरह चौथे गण के अन्य धातु-रूप समझ लीजिए। (नियत धातुएँ इस तरह हैं - (परस्मैपद) कुप्, नश्, नृत्, क्रुध्, द्रुह् । (आत्मनेपद) बुध्, मन्, युध्, विद् ।)

'लिख्' लिखना (छठा गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	लिखानि	लिखाव	लिखाम्
मध्यम पुरुष	लिख	लिखतम्	लिखत
अन्य पुरुष	लिखतु	लिखताम्	लिखन्तु

'मिल्' मिलना (छठा गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (आत्मनेपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	मिलै	मिलावहै	मिलामहै
मध्यम पुरुष	मिलस्व	मिलेथाम्	मिलध्वम्
अन्य पुरुष	मिलताम्	मिलेताम्	मिलन्ताम्

इसी तरह छठे गण के अन्य धातुओं के रूप समझ लीजिए। (नियत धातुएँ इस प्रकार हैं - (परस्मैपद) लिख्, प्र+विश् । (आत्मनेपद) मुच्, मिल्, विद्, क्षिप् ।)

'कथ्' कहना (दसवाँ गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	कथयानि	कथयाव	कथयाम्
मध्यम पुरुष	कथय	कथयतम्	कथयत
अन्य पुरुष	कथयतु	कथयताम्	कथयन्तु

'कथ्' कहना (दसवाँ गण) आज्ञार्थ (लोट् लकार) (आत्मनेपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	कथयै	कथयावहै	कथयामहै
मध्यम पुरुष	कथयस्व	कथयेथाम्	कथयध्वम्
अन्य पुरुष	कथयताम्	कथयेताम्	कथयन्ताम्

इसी तरह दसवें गण की अन्य धातुओं के रूप समझ लीजिए। (नियत धातुएँ इस प्रकार हैं - (परस्मैपद-आत्मनेपद) कथ, गण, रच, स्पृह, पूज्।)

उपर्युक्त धातुओं के रूपों के साथ 'कृ' और 'अस्' धातुओं के परस्मैपद के रूप भी महत्वपूर्ण हैं। क्योंकि इन दो धातुओं के रूप अधिक उपयोग किए जाते हैं। इसलिए जानकारी हेतु उन्हें यहाँ दिया जा रहा है :

'कृ' करना, आज्ञार्थ (लोट्‌लकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	करवाणि	करवाव	करवाम
मध्यम पुरुष	कुरु	कुरुतम्	कुरुत
अन्य पुरुष	करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु

'अस्' होना, आज्ञार्थ (लोट्‌लकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	असानि	असाव	असाम
मध्यम पुरुष	एधि	स्तम्	स्त
अन्य पुरुष	अस्तु	स्ताम्	सन्तु

विध्यर्थ (लिङ्गलकार)

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- (1) प्रातः मन्त्रान् पठेत्। (सुबह मंत्र का पाठ करना चाहिए।)
- (2) अतिथिः मध्याहे तत्रं पिबेत्। (अतिथि दोपहर में (शायद) छाश पिएँगे।)
- (3) जीवेम शरदः शतम्। (हम सौ शरद ऋतुओं तक जिएँ।)

उपर्युक्त वाक्यों में प्रयुक्त क्रियापद विध्यर्थ (लिङ्गलकार) के हैं। प्रथम वाक्य में गुरु शिष्य को सुबह मंत्र का पाठ करने की विधि कह रहे हैं अथवा आज्ञा दे रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है। दूसरे वाक्य में विध्यर्थ (लिङ्गलकार) का प्रयोग करके अतिथि शायद छाश पिएँगे, ऐसी संभावना व्यक्त की गई है। तीसरे वाक्य में सौ वर्ष तक जीवित रहने की प्रार्थना की गई है।

इस तरह विध्यर्थ (लिङ्गलकार) भी आज्ञार्थ (लोट्‌लकार) की तरह ही आज्ञा, संभावना और प्रार्थना जैसे अर्थ में प्रयुक्त होता है। (जब कि इस तरह दोनों 'लकार' के आज्ञा वगैरह अर्थ समान हैं, परन्तु आशीर्वाद के संदर्भ में एक बात विशेष याद रखने जैसी है, वह इस तरह कि लिङ्गलकार में आशीर्वाद का अर्थ कहने के लिए रूप (आज्ञा वगैरह अर्थ को व्यक्त करने हेतु प्रयुक्त रूपों से कुछ भिन्न होते हैं। रूप परिवर्तन के इस भेद को स्पष्ट रूप से दर्शाने के इरादे से आज्ञा, प्रार्थना, संभावना जैसे अर्थ को व्यक्त करने की रूपावली को विधिलिङ्ग (विधिलिङ्गलकार) और आशीर्वाद का अर्थ व्यक्त करने की रूपावली को आशीर्लिङ्ग (आशीर्लिङ्गलकार) के रूप में जाना जाता है। इस तरह विधिलिङ्गलकार और आशीर्लिङ्गलकार - ये दो प्रकार के रूप होते हैं। यहाँ तो आपको मात्र आज्ञा वगैरह का अर्थ व्यक्त करने वाले विधिलिङ्गलकार के रूपों को ही सीखना है। आशीर्लिङ्गलकार के रूप नहीं सीखने हैं।) यहाँ परस्मैपद और उसके पश्चात् आत्मनेपद के नियत धातुओं के विधिलिङ्गलकार के रूपों को देखेंगे।

विध्यर्थ (विधिलिङ्गलकार) (परस्मैपद) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	ईयम्	ईव	ईम
मध्यम पुरुष	ईः	ईतम्	ईत
अन्य पुरुष	ईत्	ईताम्	ईयुः

विध्यर्थ (विधिलिङ् लकार) (आत्मनेपद) के प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	ईय	ईवहि	ईमहि
मध्यम पुरुष	ईथा:	ईयाथाम्	ईध्वम्
अन्य पुरुष	ईत	ईयाताम्	ईरन्

यहाँ इन प्रत्ययों को दी गई धातु के साथ जोड़ते समय पहले की तरह ही धातु और इन उपर्युक्त प्रत्ययों के बीच संबंधित गण के विकरण प्रत्यय भी जोड़े जाते हैं। जैसे कि खाद् + अ + ईत् = खादेत्।

उदाहरण स्वरूप यहाँ मात्र 'पठ्' और 'लभ्' धातुओं के रूप ही दिए गए हैं।

‘पठ्’ पढ़ना (पहला गण) विध्यर्थ (विधिलिङ् लकार) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	पठेयम् मुझे पढ़ना चाहिए।	पठेव हम दोनों को पढ़ना चाहिए।	पठेम हमको पढ़ना चाहिए।
मध्यम पुरुष	पठे: तुम्हें पढ़ना चाहिए।	पठेतम् तुम दोनों को पढ़ना चाहिए।	पठेत तुमको पढ़ना चाहिए।
अन्य पुरुष	पठेत् उसे पढ़ना चाहिए।	पठेताम् उन दोनों को पढ़ना चाहिए।	पठेयुः उनको पढ़ना चाहिए।

‘लभ्’ पाना, प्राप्त करना (पहला गण) विध्यर्थ (विधिलिङ् लकार) के रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	लभेय	लभेवहि	लभेमहि
मध्यम पुरुष	लभेथा:	लभेयाथाम्	लभेध्वम्
अन्य पुरुष	लभेत	लभेयाताम्	लभेन्

इसी तरह से अन्य धातु रूप भी चलेंगे।

स्वाध्याय

1. वर्तमानकालस्य क्रियापदानां स्थाने आज्ञार्थस्य (लोट्लकारस्य) योग्यं क्रियापदं लिखत ।

- (1) जाया मधुमतीं वाचं वदति ।
- (2) त्वं स्थलान्तरं गच्छसि ।
- (3) बालः शुद्धं जलं पिबति ।
- (4) सुपुत्रः जनकं वन्दते ।
- (5) छात्राः प्रातः पाठशालां गच्छन्ति ।

- 2. ह्यस्तन भूतकालस्य क्रियापदस्य अनुरूपं वर्तमानकालस्य क्रियापदं लिखत ।**
- (1) काले पर्जन्यः अवर्षत् ।
 - (2) तातः पुत्रं समादिशत् ।
 - (3) सायं भोजनम् अभवत् ।
 - (4) जलाशयान्तरं मत्स्याः अगच्छन् ।
 - (5) छात्राः आलस्यम् अत्यजन् ।
- 3. उदाहरणानुसारं प्रदत्तानां रूपाणां परिचयं कारयत ।**
- उदाहरणम् -** भवति । भू धातु, परस्मैपद, वर्तमानकाल, अन्यपुरुष, एकवचन
- | | | | |
|--------------|--------------|----------|------------|
| (1) त्यजति | (2) विनश्यति | (3) गच्छ | (4) वर्षतु |
| (5) वर्तताम् | (6) आचरेत् | | |
- 4. योग्यं क्रियापदं चित्वा रिक्तस्थानानां पूर्तिः करणीया ।**
- | | |
|------------------------------------|----------------------------------|
| (1) अहं तावत् जलाशयान्तरं | (गच्छेत्, गच्छामि, गमिष्यति) |
| (2) पश्चात् घटोत्कचोऽहम् | (अभिवादये, अभिवादयति, अभिवादयसि) |
| (3) प्रत्युत्पन्नमतिः सुखम् | (एधेते, एधते, एधन्ते) |
| (4) तेन भवान् काष्ठानि | (आहर, आहरतु, आहरन्तु) |
| (5) सः विधिवदुपयम्य स्वनगरम् | (अनयत्, नयामि, नयन्तु) |
- 5. अधोलिखितेषु वाक्येषु प्रयुक्तस्य आज्ञार्थस्य क्रियापदस्य अर्थं लिखत ।**
- (1) सर्वे भवन्तु सुखिनः ।
 - (2) व्यायामम् आचर ।
 - (3) स्मर नाम हरेः सदा ।
 - (4) शतं जीव ।
 - (5) जनकः भोजने फलानि खादेत् ।





निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- (1) नगरे एकः धार्मिकः विनम्रः श्रेष्ठिपुत्रः प्रतिवसति ।
(शहर में सेठ का एक धार्मिक और विनम्र लड़का रहता है ।)
- (2) समायां परिशुद्धायां भूमौ तान् तप्तवती ।
(समतल स्वच्छ धरती पर उसे तपाया ।)
- (3) ततः स्नानशुद्धाय तस्मै अतिथये सा भोजनं दत्तवती ।
(उसके बाद स्नान से शुद्ध हुए उस अतिथि को उसने भोजन दिया ।)

उपर्युक्त प्रथम वाक्य में जो रेखांकित पद हैं, उन्हें विशेषण पद के रूप में जाना जाता है । विशेषण पद जब प्रयोग किए जाते हैं, तब वाक्य में उनका कोई विशेष्य पद होता ही है । जैसे कि उपर्युक्त प्रथम वाक्य में 'एकः धार्मिकः विनम्रः' ये तीन विशेषण पद हैं और इन विशेषण पदों का विशेष्य पद 'श्रेष्ठिपुत्रः' है । इसी तरह दूसरे वाक्य में 'समायाम् परिशुद्धायाम्' ये दो विशेषण पद हैं और 'भूमौ' विशेष्य पद है । जब कि तीसरे वाक्य में 'स्नानशुद्धाय तस्मै' ये दो विशेषण पद हैं और 'अतिथये' विशेष्य पद है ।

विशेषण क्या है ?

विशेषण को समझाते हुए कहा गया है कि 'भेदकं विशेषणम्'। अर्थात् जो भेद करता हो, वह विशेषण है । (और 'भेदं विशेष्यम्' अर्थात् जो भेद्य-भेद करने के योग्य होता है, जिसका भेद करना होता है, वह विशेष्य है ।) जैसे कि 'पुष्टम्' शब्द के उच्चारण से समस्त पुष्ट जाति का ज्ञान होता है । यदि पुष्ट शब्द के साथ 'रक्तं पुष्टम्' शब्द का प्रयोग किया जाय तो दुनियाभर के तमाम पुष्टों से ध्यान हटकर मात्र लाल पुष्ट पर केन्द्रित हो जाता है । इस तरह पुष्ट शब्द से जो दुनियाभर के तमाम पुष्ट का अर्थ फलित हो रहा था, उनमें भेद करके अलग करने का कार्य इस 'रक्त' शब्द ने किया है । इसलिए उसे विशेषण के रूप में जाना जाता है ।

इस तरह देखें तो पता चलता है कि जब कोई भी संज्ञापद बोला जाता है तब वह समग्र का अर्थ देता है । यदि समग्र का अर्थ न देना हो तो उस समग्र अर्थ में से किसी एक का भेद कर सके ऐसा कोई दूसरा संज्ञापद प्रयोग करना पड़ेगा । ऐसा भेद करने के लिए प्रयुक्त होने वाले संज्ञापद को विशेषण कहते हैं ।

एक काल्पनिक दृश्य देखें । बगीचे में अनेक वृक्ष हैं । यदि मात्र 'वृक्षः' इतना ही कहा जाय तो बगीचे के सभी वृक्षों में से किसी का भी बोध हो सकता है । अगर इस वृक्ष के साथ बड़ा (महत् - महान्) ऐसा एक अतिरिक्त पद प्रयोग किया जाय तो बगीचा में रहे सभी वृक्षों में से अब मात्र जो बड़े वृक्ष हैं, उनमें से किसी एक वृक्ष का बोध होगा । उसके पश्चात् बड़ा वृक्ष ऐसे इन दो पदों के साथ फलवाला (फलवत् - फलवान्) एक तीसरा संज्ञा पद प्रयोग किया जाय, तो बगीचा के सभी बड़े वृक्षों में से मात्र जो फलवाले वृक्ष हैं, उनमें से किसी एक फलवाले वृक्ष का बोध होता है । थोड़ा और आगे बढ़कर चौथा टूटा हुआ (भग्न-भग्नः) एक अतिरिक्त संज्ञापद का प्रयोग करें तो अब फलवाले वृक्षों में से, एक टूटे हुए वृक्ष का ही बोध होता है । इस तरह, वृक्ष संज्ञापद से दुनियाभर के वृक्षों से जुड़ा जो विशाल अर्थ था, उसमें 'महान् फलवान्' और 'भग्नः' इन तीन पदों ने भेद स्थापित किया, इसलिए ये तीनों 'महत् - महान् फलवत् - फलवान्' और 'भग्न-भग्नः' पद विशेषण पद के रूप में जाने जाते हैं ।

इन विशेषण पदों का प्रयोग कभी वाक्य की वृद्धि करने के लिए भी होता है। जैसे कि 'रामः वेदं पठति।' यह एक प्रारंभिक छोटा वाक्य है। इसमें एक कर्ता, एक कर्म और एक क्रियापद कुल मिलाकर तीन पद हैं। इनमें कर्ता और कर्म दो संज्ञा पद हैं और वे दोनों विशेष्य पद हैं।

अब, इन दोनों विशेष्य पदों के साथ जैसे-जैसे विशेषण पदों को जोड़ते जाएँगे, वाक्य का विस्तार होता जाएगा। जैसे, 'धीरः रामः धर्मग्रन्थं वेदं पठति।' यहाँ राम और वेद इन दो विशेष्य पदों के साथ जो एक-एक अतिरिक्त संज्ञापद प्रयुक्त हुए हैं, वे विशेषण पद हैं। इन विशेषण पदों के कारण तीन पदों वाला वाक्य बढ़कर पाँच पदवाला वाक्य बन गया है। इसी तरह विशेष्य पदों के साथ दूसरे अतिरिक्त विशेषण प्रयोग किए जाएँ, तो यह वाक्य इससे भी अधिक बड़ा बन सकता है। जैसे, 'सूर्यवंशीयः कौशल्यानन्दनः राघवः विनीतः रामः प्राचीनतमं सुप्रसिद्धं धर्मग्रन्थं वेदं पठति।' (सूर्यवंश में उत्पन्न, कौशल्या के पुत्र, रघुकुल के विनम्र राम अतिशय प्राचीन सुप्रसिद्ध धर्मग्रन्थ वेद को पढ़ते हैं।)

इस तरह विशेषण पद वाक्य की वृद्धि करते हैं। अर्थात् किसी निश्चित अर्थ की प्रतीति कराने हेतु अथवा वाक्य की वृद्धि करने हेतु वाक्य में विशेषण पदों का प्रयोग आवश्यक हो जाता है।

विशेषण का प्रयोग करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना है कि विशेष्य की जो लिंग, वचन और विभक्ति होती है, वहीं लिंग, वचन और विभक्ति विशेषण की भी होती है।

अतः, यदि कोई विशेष्य पद पुलिंग, प्रथमा विभक्ति और बहुवचन में प्रयुक्त हुआ हो, तो उसका विशेषण भी पुलिंग, प्रथमा विभक्ति और बहुवचन में ही प्रयोग करना होता है। निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- (1) बालकः प्रातःकाले मधुरं दुग्धं पिबति।
- (2) अस्मिन् वर्षे मधुरा द्राक्षा मिलति।
- (3) विगते सोमवासरे वर्यं मधुरान् आप्रान् अखादाम।

उपर्युक्त तीनों वाक्यों में 'मधुर' ऐसा (गुणवाचक) विशेषण प्रयुक्त हुआ है। वह जब 'दुग्धम्' (नपुं.-प्र.-एकवचन) विशेष्य के साथ प्रयोग किया गया है, तब 'मधुरम्' के रूप में नपुंसकलिंग, प्रथमा विभक्ति, एकवचन है। दूसरे वाक्य में वह 'द्राक्षा' (स्त्री.-प्र. एकवचन) विशेष्य के साथ प्रयुक्त हुआ है, तब 'मधुरा' के रूप में स्त्रीलिंग, प्रथमा विभक्ति, एकवचन है। इसी तरह तीसरे वाक्य में 'आप्रान्' (पु.-द्वि.-बहुवचन) विशेष्य के साथ प्रयोग किया गया है। उस समय वह 'मधुरान्' के रूप में पुलिंग, द्वितीया विभक्ति, बहुवचन में प्रयुक्त हुआ है।

इसी तरह सभी विशेषण अपने विशेष्य पद के लिंग, वचन और विभक्ति के अनुसार ही प्रयुक्त होते हैं।

विशेष्य-विशेषण के प्रयोग से संबंधित कुछ विशेष जानकारी

संख्यावाचक शब्द (पद) भी विशेषण हैं, उनमें 'एक', 'द्वि', 'त्रि' और 'चतुर' ये चार शब्द विशेष्य अनुसार अपना लिंग बदलकर पुलिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग में प्रयोग होते रहते हैं। परन्तु उसके बाद 'पञ्च' से लेकर 'अष्टादश' तक सभी शब्दों के रूप तीनों लिंग में एक समान होते हैं। जब कि 'एकोनविंशतिः' से लेकर 'नवनवतिः' तक के सभी शब्द स्त्रीलिंग में और 'शतम्, सहस्रम्' वगैरह शब्द नपुंसकलिंग में प्रयोग किए जाते हैं। (यहाँ ये बात भी याद रखना है कि 'एक' के रूप तीनों वचन में होते हैं। परन्तु 'द्वि' के रूप मात्र द्विवचन में और 'त्रि', 'चतुर्', 'पञ्च' वगैरह के रूप मात्र बहुवचन में ही होते हैं।)

जो संज्ञापद क्रिया के विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें अधिकांशतः नपुंसकलिंग, द्वितीया विभक्ति और एकवचन में ही प्रयोग करना होता है। जैसे कि 'सुन्दरं लिखति। मन्दं गायति। मधुरं वदति। सत्वरं गच्छति।' इन वाक्यों में 'सुन्दर' वगैरह जो संज्ञापद क्रिया के विशेषण के रूप में प्रयोग किए गए हैं, वे सभी नपुंसकलिंग, द्वितीय विभक्ति और एकवचन में प्रयोग किए गए हैं।

सर्वनाम के रूप

‘अस्मद्’ में (तीनों लिंग में एकसमान रूप रहते हैं ।)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया विभक्ति	माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः
तृतीया विभक्ति	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी विभक्ति	मद्यम्, मे	आवाभ्याम्, नौ	अस्मभ्यम्, नः
पंचमी विभक्ति	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी विभक्ति	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
सप्तमी विभक्ति	मयि	आवयोः	अस्मासु

‘युष्मद्’ तू, तुम (तीनों लिंग में एक समान रूप)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया विभक्ति	त्वाम्, त्वा	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः
तृतीया विभक्ति	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी विभक्ति	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पंचमी विभक्ति	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी विभक्ति	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
सप्तमी विभक्ति	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

‘तद्’ वह (पुलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	सः	तौ	ते
द्वितीया विभक्ति	तम्	तौ	तान्
तृतीया विभक्ति	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी विभक्ति	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पंचमी विभक्ति	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी विभक्ति	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी विभक्ति	तस्मिन्	तयोः	तेषु

‘तद्’ वह (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	सा	ते	ताः
द्वितीया विभक्ति	ताम्	ते	ताः
तृतीया विभक्ति	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी विभक्ति	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पंचमी विभक्ति	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
षष्ठी विभक्ति	तस्याः	तयोः	तासाम्
सप्तमी विभक्ति	तस्याम्	तयोः	तासु

‘तद्’ वह (नपुंसकलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	तत्	ते	तानि
द्वितीया विभक्ति	तत्	ते	तानि
तृतीया विभक्ति	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी विभक्ति	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पंचमी विभक्ति	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी विभक्ति	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी विभक्ति	तस्मिन्	तयोः	तेषु

(नोट : ‘तद्’ के नपुंसक के तृतीया से सप्तमी विभक्ति के रूप पुल्लिंग रूप की तरह ही चलते हैं।) इसी तरह ‘यद्’ के रूप भी हैं।

‘यद्’ जो (पुल्लिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	यः	यौ	ये
द्वितीया विभक्ति	यम्	यौ	यान्
तृतीया विभक्ति	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी विभक्ति	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पंचमी विभक्ति	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी विभक्ति	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी विभक्ति	यस्मिन्	ययोः	येषु

'यद्' जो (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	या	ये	याः
द्वितीया विभक्ति	याम्	ये	याः
तृतीया विभक्ति	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी विभक्ति	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पंचमी विभक्ति	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी विभक्ति	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी विभक्ति	यस्याम्	ययोः	यासु

'यद्' जो (नपुंसकलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	यत्	ये	यानि
द्वितीया विभक्ति	यत्	ये	यानि
तृतीया विभक्ति	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी विभक्ति	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पंचमी विभक्ति	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी विभक्ति	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी विभक्ति	यस्मिन्	ययोः	येषु

'किम्' कौन (पुलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	कः	कौ	के
द्वितीया विभक्ति	कम्	कौ	कान्
तृतीया विभक्ति	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी विभक्ति	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पंचमी विभक्ति	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी विभक्ति	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी विभक्ति	कस्मिन्	कयोः	केषु

‘किम्’ कौन (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	का	के	काः
द्वितीया विभक्ति	काम्	के	काः
तृतीया विभक्ति	कया	काभ्याम्	काभिः
चतुर्थी विभक्ति	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पंचमी विभक्ति	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
षष्ठी विभक्ति	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी विभक्ति	कस्याम्	कयोः	कासु

‘किम्’ कौन (नपुंसकलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	किम्	के	कानि
द्वितीया विभक्ति	किम्	के	कानि
तृतीया विभक्ति	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी विभक्ति	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पंचमी विभक्ति	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी विभक्ति	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी विभक्ति	कस्मिन्	कयोः	केषु

‘इदम्’ यह (पुलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया विभक्ति	इम्	इमौ	इमान्
तृतीया विभक्ति	अनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी विभक्ति	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पंचमी विभक्ति	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी विभक्ति	अस्य	अनयोः	एषाम्
सप्तमी विभक्ति	अस्मिन्	अनयोः	एषु

'इदम्' यह (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	इयम्	इमे	इमाः
द्वितीया विभक्ति	इमाम्	इमे	इमाः
तृतीया विभक्ति	अनया	आभ्याम्	आभिः
चतुर्थी विभक्ति	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पंचमी विभक्ति	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
षष्ठी विभक्ति	अस्याः	अनयोः	आसाम्
सप्तमी विभक्ति	अस्याम्	अनयोः	आसु

'इदम्' यह (नपुंसकलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	इदम्	इमे	इमानि
द्वितीया विभक्ति	इदम्	इमे	इमानि
तृतीया विभक्ति	अनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी विभक्ति	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पंचमी विभक्ति	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी विभक्ति	अस्य	अनयोः	एषाम्
सप्तमी विभक्ति	अस्मिन्	अनयोः	एषु

'सर्व' सब (पुलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया विभक्ति	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया विभक्ति	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी विभक्ति	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पंचमी विभक्ति	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी विभक्ति	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी विभक्ति	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

'सर्व' सब (स्त्रीलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	वहुवचन
प्रथमा विभक्ति	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया विभक्ति	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया विभक्ति	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी विभक्ति	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पंचमी विभक्ति	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी विभक्ति	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी विभक्ति	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

‘सर्व’ सब (नपुंसकलिंग)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा विभक्ति	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया विभक्ति	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया विभक्ति	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी विभक्ति	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पंचमी विभक्ति	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी विभक्ति	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी विभक्ति	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

स्वाध्याय

1. समुचितेन रूपेण रिक्तस्थानानां पूर्तिः करणीया ।

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
(1)	ये
(2)	सर्वस्मै
(3)	कयोः
(4)	तस्मिन्
(5)	यस्याः

2. कोष्ठगतशब्दस्य योग्यं रूपं प्रयुज्य रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(1)	विघ्नेभ्यः जनाः रक्षिताः भवन्ति ।	(कठिन)
(2) सुरापानं	वर्तते ।	(विघ्नरूप)
(3)	समयः सञ्चातः ।	(प्रलम्ब)
(4) जलम्	अस्ति रोटिका च	(उष्ण)
(5) मत्स्यः	जले प्रविष्टः ।	(गभीर)

3. सङ्ख्यावाचकेन विशेषणेन रिक्तस्थानानां पूर्तिः करणीया ।

(1)	श्रेष्ठिपुत्रः वसति ।	(एक)
(2) कूपे	कन्या दृष्ट्या ।	(एक)
(3)	विज्ञाः भवन्ति ।	(चतुर्)
(4) संस्कृतभाषायां	वचनानि सन्ति ।	(त्रि)
(5) वर्गखण्डे	छात्राः पठन्ति ।	(पञ्चविंशति)

4. कोष्ठगतशब्दस्य उचितरूपेण रिक्तस्थानानि पूरयत ।

(1)	जलाशयं दृष्ट्या धीरौः उक्तम् ।	(तत्)
(2) तत्कथं	भार्याम् अहं विन्देयमिति ।	(गुणवती)
(3)	शालीन् प्रथमम् आतपे तप्तवती ।	(तत्)
(4)	मानवाः सुखिनः भवन्तु ।	(सर्व)
(5)	पात्राणि अपि तत्र स्थापितवान् ।	(नूतन)

5. कोष्ठगतं विशेषणं वाक्ये योग्यरीत्या प्रयोजयत ।

(1) जाया पत्ये	वाचं वदतु ।	(मधुमती)
(2) दुष्टानां विद्या	भवति ।	(भाररूप)
(3)	पुस्तकानि तत्र सन्ति ।	(सर्व)
(4) इदं जलम्	।	(सगर)
(5) एषा	स्थितिः सञ्चाता ।	(मदीय)

●



(1) पुनरावर्तन

'निम्नलिखित वाक्यों को पढ़िए :

- (1) परिजनेन सुखम् अनुभवति । (परिजन से सुख का अनुभव करता है ।)
- (2) अनागतविधाता परिजनेन सह निष्क्रान्तः । (अनागत विधाता परिजन के साथ निकल गया ।)
- (1) सः तां पश्यति । (वह उसे देखता है ।)
- (2) स तां निकषा संगत्य सविनयम् आह । (वह उसके पास जाकर विनयपूर्वक बोला ।)
- (1) शक्तिकुमारः कन्याम् उद्घहति । (शक्तिकुमार कन्या विवाह करता है ।)
- (2) शक्तिकुमारः कन्यां प्रति समाकृष्टः । (शक्तिकुमार कन्या की तरफ आकर्षित हुए ।)

उपर्युक्त दो-दो वाक्यों के जोड़े में जो रेखांकित पद हैं, वे एक समान विभक्ति के हैं, परन्तु ये एक समान दिखाई देने वाली विभक्तियाँ वास्तव में अलग-अलग हैं। प्रथम क्रम वाले वाक्यों में रेखांकित पदों के साथ प्रयुक्त विभक्ति को कारक विभक्ति के रूप में जाना जाता है। जब कि दूसरे क्रम वाले वाक्यों में रेखांकित पदों के साथ प्रयुक्त विभक्ति को उपपद विभक्ति कहते हैं।

कारक विभक्ति का अर्थ

वाक्य में प्रयोग करने के लिए वक्ता द्वारा निश्चित किसी पदार्थ का पहले तो कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान या अधिकरण में से कोई कारक संज्ञा होती है और उसके पश्चात् उस कारक के कारण किसी निश्चित विभक्ति का प्रयोग करना होता है, तब उस (कारक के कारण प्रयुक्त) विभक्ति को कारक विभक्ति के रूप में जाना जाता है। जैसे, 'शिष्यः संस्कृतं पठति' यहाँ वक्ता ने पढ़ने की क्रिया के कर्म रूप में 'संस्कृत' को कहना निश्चित किया है। अतः 'संस्कृत' शब्द पहले तो कर्मकारक बनता है और उसके बाद कर्म में द्वितीया विभक्ति प्रयुक्त होने से यहाँ द्वितीया विभक्ति प्रयोग की जाती है। इस तरह कर्म ऐसी कारक संज्ञा के कारण इस द्वितीय विभक्ति को कारक विभक्ति कहते हैं।

उपपद विभक्ति का अर्थ

परन्तु जब वाक्य में प्रयुक्त किसी (उप=) नजदीक के पद के कारण किसी खास विभक्ति का उपयोग करना होता है, तब उस विभक्ति को उपपद विभक्ति कहा जाता है। जैसे कि - गणेशाय नमः। यहाँ वाक्य में 'नमः' जो एक पद प्रयुक्त हुआ है, उसके कारण 'गणेश' शब्द को चतुर्थी विभक्ति में रखा जाता है। इस तरह यहाँ 'गणेशाय' ऐसी जो चतुर्थी विभक्ति प्रयुक्त की गई है, वह उपपद विभक्ति के रूप में जानी जाती है। (आप देख सकते हैं कि यहाँ 'गणेश' को पहले कोई कारक बताकर उस कारक के अनुसार विभक्ति नहीं रखी गई है, परन्तु वाक्य में 'नमः' ऐसे नजदीक के पद के कारण चतुर्थी विभक्ति प्रयोग की गई है। इससे इस चतुर्थी विभक्ति को उपपद विभक्ति के रूप में जानते हैं।)

उपपद विभक्ति का प्रयोग

उपपद विभक्ति के प्रयोगों को सीखने के लिए किन-किन पदों के योग में कौन-कौन सी विभक्ति होती है, उसकी जानकारी आवश्यक है। इसलिए यहाँ कुछ नियत पदों के योग में होने वाली उपपद विभक्ति के नियम दिए जा रहे हैं :

1. वाक्य में जब 'उभयतः' (दोनों तरफ), 'परितः' (चारों तरफ), 'प्रति' (की तरफ), 'विना' (बिना, सिवाय) और 'अन्तरा' (बिना, बीच में), 'निकषा' (पास) जैसे अव्यय पदों का प्रयोग हुआ हो, तब वहाँ द्वितीया विभक्ति का प्रयोग करना होता है। जैसे कि, 'मार्ग उभयतः वृक्षाः सन्ति ।' (रास्ता के दोनों ओर वृक्ष हैं।), 'गिरि परितः मार्गः वर्तते ।' (पर्वत के चारों ओर रास्ता है।), 'वृक्षं प्रति प्रकाशते विद्युत् ।' (पेड़ की तरफ बिजली प्रकाशित है।), 'विद्यां विना निष्फलं हि जीवनम् ।' (विद्या बिना का जीवन निष्फल ही है।)

इन सभी वाक्यों में क्रमशः 'उभयतः; परितः; प्रति' और 'विना' पदों का प्रयोग होने से, उन पदों के योग के कारण क्रमशः 'मार्गम्, गिरिम्, वृक्षम्' और 'विद्याम्' पदों में द्वितीय विभक्ति प्रयोग की गई है।

2. वाक्य में जब 'सह' (साथ) 'सार्थम्/समम्' (साथ), 'अलम्' (पर्याप्त के अर्थ में, पूर्णता के अर्थ में, रोकने के अर्थ में) जैसे अव्यय पदों का प्रयोग हुआ हो, तब तृतीया विभक्ति का प्रयोग करना होता है। जैसे कि 'जलप्रवाहेण सह समुद्रं मिलति ।' (जल प्रवाह के साथ समुद्र में मिलता है।), 'गिरिणा सार्थं/समं वनमपि अस्ति ।' (पर्वत के साथ बन भी है।), 'अलं पठनेन ।' (अब पढ़ना रहने दो। इतना पढ़ना पर्याप्त है।)

इन सभी वाक्यों में क्रमशः 'सह', 'सार्थम्' और 'अलम्' पदों का प्रयोग होने से, उन पदों के योग के कारण क्रमशः 'जलप्रवाहेण, गिरिणा' और 'पठनेन' पदों में तृतीया विभक्ति प्रयोग की गई है। (उपर्युक्त) पदों में से जो 'विना'

(बिना, सिवाय) पद है, उसके योग में कभी तृतीया अथवा पंचमी विभक्ति भी प्रयोग की जाती है। जैसे कि 'धर्मेण/ धर्मात् बिना सुखं न भवति।' (धर्म के बिना सुख नहीं होता।)

3. वाक्य में जब 'नमः' (प्रणाम-वंदन-नमन, मान करना), 'स्वाहा' (देवों को कोई वस्तु समर्पित करते समय बोला जाने वाला शब्द, समर्पण का भाव), 'स्वस्ति' (कल्याण हो, भला हो - ऐसा अर्थ देने वाला उद्गार) जैसे अव्यय पदों का प्रयोग हुआ हो, तो वहाँ चतुर्थी विभक्ति प्रयोग की जाती है। जैसे कि 'रामाय नमः।' (राम को वंदन।), 'अग्नये स्वाहा।' (यह द्रव्य अग्नि को समर्पित है।), 'पुत्राय स्वस्ति।' (पुत्र का कल्याण हो।)

इन सभी वाक्यों में क्रमशः 'नमः', 'स्वाहा' और 'स्वस्ति' पदों का प्रयोग होने से, उन पदों के योग के कारण क्रमशः 'रामाय, अग्नये' और 'पुत्राय' पदों में चतुर्थी विभक्ति प्रयोग की गई है।

4. वाक्य में जब 'ऋते' (सिवाय, बिना), 'प्रभृति' (से ले करके) जैसे अव्यय पदों का प्रयोग किया गया हो, तो वहाँ पंचमी विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे कि 'ऋते ज्ञानात् न सुखम्।' (ज्ञान सिवाय सुख नहीं है।), 'बाल्यात् प्रभृति गायति।' (बचपन से लेकर गाता है।)

इन सभी वाक्यों में क्रमशः 'ऋते' और 'प्रभृति' पदों का प्रयोग होने से, उन पदों के योग के कारण क्रमशः 'ज्ञानात्' और 'बाल्यात्' पदों में पंचमी विभक्ति प्रयुक्त की गई है।

5. वाक्य में जब 'कृते' (लिए) 'अग्रे' (आगे) 'पुरतः' (आगे, पूर्व में, सामने) जैसे अव्यय पदों का प्रयोग किया गया हो, तो वहाँ षष्ठी विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे कि 'संस्कृतस्य कृते जीवति।' (संस्कृत के लिए जीता है।), 'देशस्य अग्रे अहं किमपि नास्मि।' (देश के आगे मैं कुछ भी नहीं हूँ), 'सज्जनस्य पुरतः दुर्जनः न तिष्ठति।' (सज्जन के सामने दुर्जन खड़ा नहीं रहता है।)

इन सभी वाक्यों में क्रमशः 'कृते, अग्रे' और 'पुरतः' पदों का प्रयोग होने से, उन पदों के योग के कारण क्रमशः 'संस्कृतस्य, देशस्य' और 'सज्जनस्य' पदों में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग किया गया है।

स्वाध्याय

1. समुचितेन रूपेण रिक्तस्थानानां पूर्तिः करणीया ।

- | | |
|----------------------------------|---------|
| (1) समं पाठशालां गच्छ । | (मित्र) |
| (2) समाचर । | (धर्म) |
| (3) निकषा कन्या दृष्टा । | (कूप) |
| (4) समरेषु भव । | (भीम) |
| (5) विना दुर्घटना न भवति । | (कारण) |

2. रेखाङ्कितेषु पदेषु प्रयुक्तायाः विभक्तेः परिचयं कारयत ।

- | |
|---|
| (1) मार्गे कदाचित् दुर्घटनाः अपि घटन्ति । |
| (2) भीताः पूर्वाजपुरुषाः देशान्तरं ब्रजन्ति । |
| (3) पठनेन विना न प्राप्यते विद्या । |
| (4) भोः श्रेष्ठिन् ! अलम् आशङ्क्या । |
| (5) रक्तमपि तस्मै दातव्यम् । |

3. परस्परं मेलयत ।

क	ख
(1) पञ्चमी विभक्तिः	(1) सह
(2) षष्ठी विभक्तिः	(2) कृते
(3) द्वितीया विभक्तिः	(3) ऋते
(4) तृतीया विभक्तिः	(4) स्वाहा
(5) चतुर्थी विभक्तिः	(5) परितः





कक्षा - 9 में आप संबंधक भूतकृदन्त और हेत्वर्थ कृदन्त से परिचित हो गए हैं। अब, आपको दूसरे दो कृदन्तों से परिचित होना है। इन दो कृदन्तों का नाम है : 1. भूतकृदन्त और 2. विधर्थ कृदन्त।

(1) भूतकृदन्त :

नीचे दिए गए 'क' वर्ग और 'ख' वर्ग के वाक्यों को ध्यान से पढ़िए :

क

- (1) कृष्णः पठनाय गुरुकुलम् अगच्छत्।
- (2) गार्गी एकं वेदम् अपठत्।
- (3) छात्रः काव्यम् अलिखत्।

ख

- (1) कृष्णः पठनाय गुरुकुलम् गतवान्।
- (2) गार्गी एकं वेदं पठितवती।
- (3) छात्रः काव्यं लिखितवान्।

उपर्युक्त 'क' विभाग के सामने दूसरा एक 'ख' विभाग दिया गया है। इन दोनों विभागों के वाक्यों में जो रेखांकित पद हैं, वे सभी क्रियापद हैं। दोनों वर्ग में आमने-सामने दिए गए प्रत्येक वाक्य में ('अगच्छत्') और ('गतवान्') इस रूप में क्रियापद अलग-अलग प्रकार के हैं, फिर भी 'क' विभाग का वाक्य जो अर्थ दे रहा है, वही अर्थ 'ख' विभाग का वाक्य भी देता है। इस तरह, एक ही अर्थ को कहने के लिए दोनों वाक्यों में अलग-अलग क्रियापद प्रयोग किए जाते हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि वक्ता चाहे तो उपर्युक्त 'क' विभाग के वाक्य के बदले में 'ख' विभाग के वाक्य भी प्रयोग कर सकता है। दूसरी तरह कहें तो उपर्युक्त वाक्यों में क्रियापद अलग-अलग होने पर भी ('क' विभाग और 'ख' विभाग के) दोनों वाक्यों का अर्थ समान है। वक्ता चाहे जो वाक्य प्रयोग कर सकता है।

'क' विभाग 1. कृष्णः पठनाय गुरुकुलम् अगच्छत्। और 'ख' विभाग 1. कृष्णः पठनाय गुरुकुलम् गतवान्। दोनों वाक्यों के क्रियापद में 'गम्' - 'गच्छ' धातु का प्रयोग हुआ है। यहाँ दोनों वाक्यों में भूतकाल को कहने की वक्ता की इच्छा (विवक्षा) है। इस तरह, धातु और काल समान होने पर भी दोनों वाक्यों में क्रियापद 'अगच्छत्' और 'गतवान्' रूप में अलग-अलग हैं। इसका कारण धातु के पीछे आया हुआ प्रत्यय है। जैसे कि;

(1) 'क' विभाग के नीचे जो वाक्य दिए गए हैं, उनमें प्रयुक्त क्रियापद ह्यस्तन भूतकाल के हैं और वे ति-प्रत्ययान्त तिडन्त ('तिप्' वगैरह परस्मैपद के प्रत्ययों से युक्त हैं) हैं। अतः ऐसे क्रियापदों में पुरुष तथा वचन की योग्य व्यवस्था बनाए रखना होता है। (ऐसी व्यवस्था के नियम नवीं कक्षा में आप पढ़ चुके हैं।)

(2) 'क' विभाग के सामने 'ख' विभाग में जो वाक्य दिए गए हैं, उनमें प्रयुक्त क्रियापद भूतकाल के हैं, परन्तु वे (तिडन्त के नहीं, परन्तु) कृदन्त ('कृत्' प्रत्यय वाले) हैं। ऐसे क्रियापदों वाले वाक्य में तिडन्त क्रियापद की तरह पुरुष और वचन की व्यवस्था के विषय में सोचना नहीं पड़ता।

परन्तु याद रखिए कि ऐसे भूतकृदन्त क्रियापद दो प्रकार के हैं : 1. त (क्त) प्रत्ययान्त और 2. (वत् क्तवत्) प्रत्ययान्त। ऐसे क्रियापदों का प्रयोग करते समय नीचे की कुछ महत्वपूर्ण बातें ध्यान रखनी आवश्यक हैं। जैसे कि -

क. त (क्त) प्रत्ययान्त क्रियापद होता है, वह कर्मणि या भावे (अर्थात् कर्म अर्थ में अथवा तो भाव अर्थ में) होता है। इस कारण से त (क्त) प्रत्ययान्त क्रियापदों का प्रयोग करते समय कर्मणि और भावे वाक्य रचना करनी पड़ती है। अब, कर्मणि वाक्यरचना के लिए नीचे की तीन बातों का ध्यान रखना पड़ता है। जैसे कि;

- (1) कर्मणि या भावे वाक्यरचना में कर्ता को हमेशा तृतीया विभक्ति में रखा जाता है।
- (2) कर्म को प्रथमा विभक्ति में रखते हैं।
- (3) क्रियापद, कर्म की तरह लिंग, विभक्ति और वचन में होता है।

उदाहरण के स्वरूप में 'कुशेन आप्रसः पीतः।' (कुश ने आम का रस पिया।) यहाँ 'कुशेन' कर्ता में तृतीया विभक्ति और 'आप्रसः' कर्म में (पुल्लिंग) प्रथमा विभक्ति, एकवचन प्रयोग हुआ है। इसके पश्चात् यहाँ प्रयुक्त 'आप्रसः' यह कर्म अनुसार 'पीतः' इस क्रियापद में पुल्लिंग, प्रथमा विभक्ति और एकवचन का प्रयोग किया गया है।

इसी तरह जब 'भावे' वाक्य रचना (जिसमें कर्म न हो वैसी अकर्मक वाक्य रचना) करनी हो, तब भी नीचे की तीन बातों का ध्यान रखना होता है। जैसे :

(1) 'भावे' वाक्यरचना में कर्ता को हमेशा तृतीया विभक्ति में रखा जाता है।

(2) 'भावे' वाक्यरचना में कभी भी कर्म नहीं होता है। (ऐसे वाक्यों में क्रियापद अकर्मक होते हैं। अतः वहाँ कर्म नहीं होता है। परिणाम स्वरूप उनके प्रयोग में कुछ भी ध्यान नहीं रखना होता है।)

(3) क्रियापद हमेशा नपुंसकलिंग, प्रथमा विभक्ति और एकवचन में प्रयोग करना होता है।

जैसे; 'रामेण हसितम्।' (राम से हँसा गया।) यहाँ 'रामेण' कर्ता तृतीया विभक्ति में है। यहाँ कर्म है ही नहीं, अतः उसके प्रयोग के नियम के विषय में सोचना ही नहीं है। यहाँ जो क्रियापद है, वह 'हसितम्' है। उसका नियमानुसार नपुंसकलिंग, प्रथमा विभक्ति और एकवचन में प्रयोग किया गया है। (इसी तरह 'सीताया हसितम्।' वगैरह प्रयोगों में जहाँ कर्ता स्त्रीलिंग में हो, वहाँ भी क्रियापद हमेशा नपुंसकलिंग, प्रथमा विभक्ति और एकवचन में ही प्रयोग किया जाता है।)

ख. तवत् (क्तवत् > क्तवत् > तवत्) प्रत्ययान्त क्रियापद 'कर्तरि' (अर्थात् कर्ता अर्थ में) होता है। इस कारण वत् प्रत्ययान्त क्रियापद का जब उपयोग करना हो, तब वहाँ 'कर्तरि' वाक्य रचना करनी होती है।

'कर्तरि' वाक्यरचना करने के लिए नीचे की बातें ध्यान में रखना चाहिए। जैसे;

(क) 'कर्तरि' वाक्यरचना में कर्ता प्रथमा विभक्ति में रहता है।

(ख) कर्म हो, तो वह द्वितीया विभक्ति में रखा जाता है।

(ग) कृदन्त पद में कर्ता का अनुकरण करके कर्ता की तरह ही लिंग, वचन और विभक्ति प्रयोग करना होता है।

जैसे; 'देवदत्तः ग्रन्थान् दत्तवान्।' यहाँ कर्ता 'देवदत्तः' है, वह (पु.) प्रथमा विभक्ति एकवचन में है। 'ग्रन्थान्' यह कर्म है। उसका द्वितीया विभक्ति में प्रयोग हुआ है। उसके बाद 'दत्तवान्' जो कृदन्त क्रियापद है, वह कर्ता के अनुसार (दत्तवत् > दत्तवान् इस्तरह) पुल्लिंग में प्रथमा, एकवचन में प्रयुक्त हुआ है।

कर्मणिभूतकृदन्त (क्त > त प्रत्ययान्त रूप)

(1) कृ + त = कृत। (पुं. कृतः, स्त्री. कृता, नपुं. कृतम्।)

(2) भू + त = भूत। (पुं. भूतः, स्त्री. भूता, नपुं. भूतम्।)

(3) पा + त = पीत। (पुं. पीतः, स्त्री. पीता, नपुं. पीतम्।)

(4) खाद् + त = खादित। (पुं. खादितः, स्त्री. खादिता, नपुं. खादितम्।)

(5) गम् + त = गत। (पुं. गतः, स्त्री. गता, नपुं. गतम्।)

(6) दा + त = दत्त। (पुं. दत्तः, स्त्री. दत्ता, नपुं. दत्तम्।)

कर्तरि भूतकृदन्त (क्तवत् > तवत् > तवत् प्रत्ययान्त) रूप

(1) कृ + तवत् = कृतवत्।। (पुं. कृतवान्, स्त्री. कृतवती, नपुं. कृतवत्।)

(2) भू + तवत् = भूतवत्। (पुं. भूतवान्, स्त्री. भूतवती, नपुं. भूतवत्।)

(3) पा + तवत् = पीतवत्। (पुं. पीतवान्, स्त्री. पीतवती, नपुं. पीतवत्।)

(4) खाद् + तवत् = खादितवत्। (पुं. खादितवान्, स्त्री. खादितवती, नपुं. खादितवत्।)

(5) गम् + तवत् = गतवत्। (पुं. गतवान्, स्त्री. गतवती, नपुं. गतवत्।)

(6) दा + तवत् = दत्तवत्। (पुं. दत्तवान्, स्त्री. दत्तवती, नपुं. दत्तवत्।)

उपर के उदाहरणों से समक्ष में आता है कि कर्मणि भूतकृदन्त को (भूत)वत् लगाने से कर्तरि भूतकृदन्त बनता है—(भूतवत्)

(2) विध्यर्थ कृदन्त

नीचे दिए गए 'क' वर्ग और 'ख' वर्ग के वाक्यों को ध्यान से पढ़िए :

क

- (1) कृष्णः श्लोकं लिखेत्।
- (2) छात्राः प्रातः वेदं पठेयुः।
- (3) छात्रः हसेत्।

ख

- (1) कृष्णेन श्लोकः लिखितव्यः।
- (2) छात्रैः प्रातः वेदः पठितव्यः।
- (3) छात्रेण हसितव्यम्।

ऊपर 'क' के सामने दूसरा एक 'ख' विभाग दिया गया है। इन दोनों विभागों के वाक्यों में जो रेखांकित पद हैं, वे सभी क्रियापद हैं। दोनों वर्ग में आमने-सामने दिए गए प्रत्येक वाक्य में जब कि क्रियापद 'लिखेत्' और 'लिखितव्यः' (रूप में) अलग-अलग प्रकार के हैं, फिर भी 'क' विभाग का वाक्य जो अर्थ दे रहा है, वही अर्थ 'ख' विभाग का वाक्य भी देता है। इस तरह एक ही अर्थ को कहने के लिए दोनों वाक्यों में अलग-अलग क्रियापद प्रयोग किए गए हैं।

इस पर से पता चलता है कि वक्ता चाहे तो यहाँ भी उपर्युक्त 'क' विभाग में आए वाक्य के बदले में उसके सामने 'ख' विभाग में आए दूसरे वाक्य का भी प्रयोग कर सकता है।

इस प्रकार के वाक्य की संरचना समझने के लिए नीचे की कुछ बातें जान लेना जरूरी है। (इनमें से तो कुछ बातें पहले भूतकृदन्त के वाक्य प्रयोगों के समय आप जान चुके हैं। यहाँ उनके समान बातों का पुनरावर्तन ही होना है।)

'क' विभाग का 1. कृष्णः श्लोकं लिखेत्। और 'ख' विभाग का 1. कृष्णेन श्लोकः लिखितव्यः। दोनों वाक्यों के क्रियापद में 'लिख्' धातु का प्रयोग हुआ है। तथा यहाँ दोनों वाक्यों में विध्यर्थ को कहने की वक्ता की इच्छा (विक्षा) है। इस तरह, धातु और (विध्यर्थ ऐसा) अर्थ एक समान होने पर भी दोनों वाक्यों में क्रियापद 'लिखेत्' और 'लिखितव्यः' इस रूप में अलग-अलग हैं। इसका कारण यहाँ धातु के पीछे आया हुआ प्रत्यय है। जैसे,

1. 'क' विभाग के नीचे जो वाक्य दिए गए हैं, उनमें प्रयुक्त क्रियापद विध्यर्थ के हैं। 'तिङ्गत्त' हैं। ऐसे क्रियापदों में पुरुष तथा वचन की योग्य व्यवस्था बनाए रखना होता है। (ऐसी व्यवस्था के नियम आप नवीं कक्षा में पढ़ चुके हैं।)

2. 'क' विभाग के सामने 'ख' वर्ग में जो वाक्य दिए गए हैं, उनमें प्रयुक्त क्रियापद विध्यर्थ के हैं, परन्तु वे ('तिङ्गत्त' नहीं, परंतु) कृदन्त ('कृत्' प्रत्यय वाले) हैं। ऐसे क्रियापदों वाले वाक्य में तिङ्गत्त क्रियापद की तरह पुरुष और वचन की व्यवस्था नहीं करनी होती।

याद रखिए, विध्यर्थ कृदन्त के क्रियापद दो प्रकार के हैं : 1. 'तव्य' प्रत्ययान्त और 2. 'अनीयर्' (अनीय) प्रत्ययान्त। ऐसे क्रियापदों का प्रयोग करते समय यह बात ध्यान रखना है कि विध्यर्थ कृदन्त के ये दोनों प्रत्यय 'कर्मणि' (कर्म अर्थ में) या 'भावे' (भाव अर्थ में) आते हैं। इसलिए इस 'तव्य' और 'अनीय' प्रत्ययान्त क्रियापद वाली वाक्य रचना में (क्त) 'त' प्रत्ययान्त क्रियापद के प्रयोग की तरह सभी नियम लागू पड़ते हैं। जैसे,

'कर्मणि' वाक्यरचना के लिए नीचे अनुसार तीन बातें ध्यान रखनी होती हैं :

'कर्मणि' वाक्यरचना में (1) कर्ता हमेशा तृतीया विभक्ति में होता है। (2) कर्म प्रथमा विभक्ति में रखा जाता है। (3) क्रियापद कर्म के अनुसार लिंग, विभक्ति और वचन में रहता है।

उदाहरण स्वरूप 'चन्दनदासः शिष्येण अत्र आनेतव्यः। (चंदनदास के शिष्य को यहाँ लाना चाहिए।) यहाँ 'शिष्येण' कर्ता में तृतीया विभक्ति, 'चन्दनदासः' कर्म में (पु.) प्रथमा विभक्ति और 'आनेतव्यः' यह क्रियापद

‘चन्दनदासः’ कर्म में (पु.) प्रथमा विभक्ति और ‘आनेतव्यः’ यह क्रियापद ‘चन्दनदासः’ इस कर्म अनुसार पुल्लिंग प्रथमा विभक्ति में प्रयोग हुआ है। (इसी तरह जब ‘अनीय’ प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है, तब ‘चन्दनदासः शिष्येण अत्र आनयनीयः।’ ऐसा वाक्य प्रयोग होता है।)

इसी तरह जब ‘भावे’ वाक्यरचना करनी होती है, तब उसके लिए भी निमानुसार तीन बातें ध्यान रखनी होती हैं :

- (1) ‘भावे’ वाक्यरचना में कर्ता हमेशा तृतीया विभक्ति में होता है।
- (2) ‘भावे’ वाक्यरचना में कभी भी कर्म नहीं होता है। (इसलिए उसके प्रयोग के संबंध में कुछ भी ध्यान नहीं रखना है।)
- (3) क्रियापद को हमेशा नपुंसकलिंग, प्रथमा विभक्ति और एकवचन में रखा जाता है।

उदाहरण स्वरूप (इदमासनम्, तत्र) त्वया स्थातव्यम्। (यह आसन है, वहाँ तुम्हें बैठना चाहिए।) यहाँ ‘त्वया’ यह कर्ता तृतीया विभक्ति में है, कर्म होता नहीं, इसलिए उस पर विचार करना नहीं है और ‘स्थातव्यम्’ यह क्रियापद नपुंसकलिंग प्रथमा विभक्ति एकवचन में प्रयुक्त हुआ है। (इसी तरह जब ‘अनीय’ प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है, तब (इदमासनम्, तत्र) त्वया स्थानीयम्। ऐसा वाक्य प्रयोग होता है।

विध्यर्थ कृदन्त (क्त > त प्रत्यान्त) रूप

- (1) भू + तव्य = भवितव्य। (पुं. भवितव्यः; स्त्री. भवितव्या, नपुं. भवितव्यम्।)
- (2) पा + तव्य = पातव्य।। (पुं. पातव्यः; स्त्री. पातव्या, नपुं. पातव्यम्।)
- (3) खाद् + तव्य = खादितव्य। (पुं. खादितव्यः; स्त्री. खादितव्या, नपुं. खादितव्यम्।)
- (4) गम् + तव्य = गन्तव्य। (पुं. गन्तव्यः; स्त्री. गन्तव्या, नपुं. गन्तव्यम्।)
- (5) दा + तव्य = दातव्य। (पुं. दातव्यः; स्त्री. दातव्या, नपुं. दातव्यम्।)

विध्यर्थ कृदन्त (‘अनीय’ प्रत्यान्त)

- (1) भू + अनीय = भवनीय। (पुं. भवनीयः; स्त्री. भवनीया, नपुं. भवनीयम्।)
- (2) पा + अनीय = पानीय।। (पुं. पानीयः; स्त्री. पानीया, नपुं. पानीयम्।)
- (3) खाद् + अनीय = खादनीय। (पुं. खादनीयः; स्त्री. खादनीया, नपुं. खादनीयम्।)
- (4) गम् + अनीय = गमनीय। (पुं. गमनीयः; स्त्री. गमनीया, नपुं. गमनीयम्।)
- (5) दा + अनीय = दानीय। (पुं. दानीयः; स्त्री. दानीया, नपुं. दानीयम्।)

स्वाध्याय

1. अधोलिखितानां कृदन्तपदानां प्रकारं लिखत ।

- | | | | |
|-------------|-------|--------------|-------|
| (1) पठनीयम् | | (2) दानीयः | |
| (3) रक्षितः | | (4) गन्तव्यः | |

2. अधोलिखितेषु पदेषु विध्यर्थकृदन्तपदानां चयनं कुरुत ।

- | | | | |
|----------------|-------|----------------|-------|
| (1) स्थातव्यम् | | (2) पानीयम् | |
| (3) परिचेतुम् | | (4) हसनीयम् | |
| (5) लिखिता | | (6) द्रष्टव्या | |

3. निम्नलिखितानां कृदन्तानां प्रत्ययनिर्देशपूर्वकं प्रकारं लिखत ।

- | | |
|---------------------|-------------------------|
| (1) गन्तव्यम् | (2) कृता |
| (3) भूतः | (4) खादनीयः |
| (5) पठितव्यम् | (6) प्रवेष्टव्यम् |

4. क्रियापदस्य स्थाने कर्मणि भूतकृदन्तस्य योग्यं रूपं लिखत ।

- (1) मत्स्यः उत्प्लुत्य गभीरं नीरं प्राविशत्।
- (2) पितामहं द्रष्टुं त्वं स्वर्गम् अगच्छः।
- (3) वेदव्यासः महाभारतम् अरचयत्।
- (4) बालकाः संस्कृतम् अपठन्।
- (5) देवेशः इदानीं किम् अपश्यत्।

5. क्रियापदस्य स्थाने विध्यर्थकृदन्तस्य योग्यं रूपं लिखत ।

- (1) नन्दस्य गुणान् स्मरेत्।
- (2) क्वचित् सहसा न वदेः।
- (3) एवं कथं भवेत्।
- (4) नीरिमा एव पुरतः प्रविशेत्।
- (5) विद्याभ्यासं समाचरेत्।





संस्कृत में समास के मुख्य चार प्रकार हैं : 1. अव्ययीभाव 2. तत्पुरुष 3. बहुव्रीहि 4. द्वन्द्व। इनमें से तत्पुरुष और द्वन्द्व - इन दो प्रकार के समासों का नवीं कक्षा में आप अध्ययन कर चुके हैं। यहाँ तत्पुरुष समास का ही एक प्रकार माना जाने वाला कर्मधारय और बहुव्रीहि समास आपको सीखना है।

कर्मधारय और बहुव्रीहि समास का अध्ययन प्रारंभ करें, उससे पहले पिछले वर्ष आप समास से संबंधित जो बातें सीख चुके हैं, उनका थोड़ा पुनरावर्तन करना आवश्यक है। इसके लिए नीचे के वाक्यों को ध्यानपूर्वक पढ़िए :

(1) सेवितव्यः महान् वृक्षः।

(2) सेवितव्योः महावृक्षः।

उपर्युक्त प्रथम वाक्य में जो दो रेखांकित संज्ञापद प्रयुक्त हुए हैं, वही दोनों संज्ञापद दूसरे वाक्य में समास होकर (अर्थात् एक हो करके, संक्षिप्त हो करके) प्रयुक्त हुआ है। यहाँ हम देख सकते हैं कि पहले वाक्य में 'महान्' और 'वृक्षः' ऐसे जो दो संज्ञापद हैं, वे अलग-अलग पद के रूप में प्रयोग हुए हैं और उनके साथ अलग-अलग विभक्ति प्रत्यय जुड़े हैं। इसके बाद दूसरे वाक्य में इन दोनों संज्ञापदों का समास (महावृक्षः) होकर जो प्रयोग हुआ है, उसमें दोनों संज्ञा के अंत में एक ही विभक्ति प्रत्यय जुड़ा है। आप सीख चुके हैं कि ऐसा होने का कारण समास है।

आइए, अब आगे और समास का अध्ययन करें।

(1) कर्मधारय समास

कर्मधारय समास तत्पुरुष समास का एक बड़ा प्रकार है, इसलिए इसे कर्मधारय तत्पुरुष के नाम से भी जानते हैं। यह समास विशेष्य और विशेषण - इन दो पदों से बना है। (विशेष्य-विशेषण की समझ के लिए अभ्यास-2 देखिए।) जैसे कि नीचे के दो वाक्यों को पढ़िए :

(1) सरोवरे नीलं कमलं वर्तते।

(2) सरोवरे नीलकमलं वर्तते।

यहाँ प्रथम वाक्य में 'नीलम्' और 'कमलम्' ऐसे जो दो पद हैं, वे प्रथमा विभक्ति में हैं। इस प्रथमा विभक्ति में रहे दोनों पद द्वितीय वाक्य में सामासित होकर प्रयोग हुए हैं। आपको यह याद रखना है कि -

(1) यहाँ 'नीलम्' यह विशेषण पद है और 'कमलम्' यह विशेष्य पद है।

(2) जब विशेष्य और विशेषण का समास होता है, तब वहाँ पूर्वपद में और उत्तर पद में - दोनों पदों में एक समान विभक्ति होती है। यहाँ दोनों पदों में प्रथमा विभक्ति है।

(3) ऐसे विशेष्य - विशेषण पदों के तत्पुरुष समास को कर्मधारय कहा जाता है।

इस प्रकार के विशेष्य और विशेषण पदों से बने सामासिक पद का विग्रह करते समय (यदि दोनों पद पुलिंग के हों, तो) दोनों पदों के बीच 'च' असौ (चासौ), (स्त्रीलिंग का हो, तो) 'च असौ' (चासौ) और (नपुंसकलिंग का हो, तो) 'च तत्' पद भी रखे जाते हैं। जैसे,

(1) वामः च असौ बाहुः - वामबाहुः।

(2) मुक्ता च असौ (चासौ) मणिः - मुक्तामणिः।

(3) विक्रान्तं च तत् कार्यम् - विक्रान्तकार्यम्।

उपर्युक्त वाक्यों में क्रमशः पुलिंग विशेषणों का पुलिंग विशेष्य के साथ, स्त्रीलिंग विशेषणों का स्त्रीलिंग विशेष्य के साथ और नपुंसकलिंग विशेषण का नपुंसकलिंग विशेष्य के साथ समास हुआ है।

अब, नीचे का एक दूसरा वाक्य पढ़िए :

- (1) पाणिनेः कृतिः अष्टाध्यायी वर्तते ।
- (1) पाणिनेः कृतिः अष्टानाम् अध्यायानां समाहारः वर्तते ।

प्रथम वाक्य में प्रयुक्त 'अष्टाध्यायी' पद में समास है। दूसरे वाक्य में उसका विग्रह वाक्य 'अष्टानाम् अध्यायानां समाहारः' प्रयोग हुआ है। याद रखिए कि इस विग्रह वाक्य में आया 'अष्टानाम्' पद विशेषण है और 'अध्यायानाम्' पद विशेष्य है। जब कि इस विशेष्य और विशेषण दोनों पदों में एक समान विभक्ति - षष्ठी विभक्ति है। इस तरह, यहाँ भी विशेष्य-विशेषण का और एक समान विभक्ति वाले पदों का समास होने से यह कर्मधारय तत्पुरुष समास है; परन्तु इस समास में एक अन्य विशेषता भी है। वह यह कि विशेष्य-विशेषण का यह समास समाहार (अर्थात् अमुक वस्तु का समूह) अर्थ में है। इस प्रकार के समाहार अर्थ में होने वाले कर्मधारय तत्पुरुष समास में यदि संख्यावाचक पद पूर्वपद में हो, तो उसे द्विगु समास भी कहते हैं। यह द्विगु समास यदि अकारान्त हो, तो वह स्थाई रूप से स्त्रीलिंग में ही प्रयोग होता है। (और इस कारण स्त्रीलिंग का वाचक 'ई' प्रत्यय जुड़ता है।) जबकि इस समास में समाहार ऐसा अर्थ शामिल है, ऐसा बताने के लिए सामासिक पद का विग्रह वाक्य देते समय दोनों पदों के अंत में 'समाहारः' पद भी रखा जाता है। जैसे कि; अष्टानाम् अध्यायानां समाहारः = अष्टाध्यायी। यह द्विगु (कर्मधारय) तत्पुरुष समास का उदाहरण है।

यह कर्मधारय तत्पुरुष समास का ही एक प्रकार होने से यहाँ भी उत्तरपद के अर्थ की प्रधानता होती है।

(2) बहुत्रीहि समास

निम्नलिखित वाक्यों को ध्यान से पढ़िए :

- (1) तीक्ष्णबुद्धिः: जनः सर्वान् अर्थान् धिया पश्यति ।
- (2) बहुमत्स्यः: अयं ह्रदः।
- (3) अर्जुनः अपि जातहर्षः तैः सह संलग्नः अभवत् ।

इन सभी वाक्यों में रेखांकित पद सामासिकपद हैं और यहाँ बहुत्रीहि समास है। इन सामासिक पदों का विग्रह करने पर (तीक्ष्णबुद्धिः) तीक्ष्णा बुद्धिः यस्य सः; (बहुमत्स्यः) बहवः मत्स्याः यस्मिन् सः; (जातहर्षः) जातः हर्षः यस्य सः; (जातहर्षः) जातः हर्ष यस्य सः; - ऐसे चार-चार पदों का उपयोग करना पड़ता है। बहुत्रीहि समास के विग्रह वाक्य में प्रयुक्त इन सभी पदों को आप ध्यान से देखिए, आपको पता चलेगा कि -

- (1) अलग हुए चार पदों में से समास तो मात्र दो ही पदों का हुआ है।
- (2) जिन दो पदों का समास हुआ है, उनमें एक समान रूप से प्रथमा विभक्ति का प्रयोग हुआ है।
- (3) विग्रह वाक्य में जो दूसरे दो पद दिखाई देते हैं, वैसे दो पद इस बहुत्रीहि समास के विग्रह वाक्य में ही देखने को मिलते हैं; उसके अतिरिक्त अन्य समासों के विग्रह वाक्य में नहीं दिखाई देते हैं। (अतः यह सोचना जरूरी है कि बहुत्रीहि समास में ही ये पद क्यों प्रयोग किए जाते हैं, अन्य समास में क्यों नहीं।)

अब, इन तीन बातों को ध्यान में रख करके बहुत्रीहि समास की प्रक्रिया सीखना है :

- (1) बहुत्रीहि समास एक साथ अनेक विभक्ति के पदों का हो सकता है।
- (2) समास में जितने विभक्ति के पद जोड़ने होते हैं, वे सभी प्रथमा विभक्ति में होते हैं।
- (3) समास में प्रयुक्त सभी पद अपना अर्थ खोकर अन्य किसी पद का अर्थ कहते हैं। (ऐसे अन्य पद का अर्थ दर्शाने के लिए ही विग्रह वाक्य में 'यस्य सः' जैसे अतिरिक्त पद का प्रयोग होता है।)

कुछ प्रयोग देखिए :

- (1) स्नेहपूर्णदृष्टिः (कुमारः)। इसका विग्रह वाक्य है - स्नेहपूर्णा दृष्टिः यस्य सः।

- (2) लब्धपदः (नीचः) | इसका विग्रह वाक्य है – लब्धं पदं येन सः।
- (3) गतरोगः (नरः) | इसका विग्रह वाक्य है – गतः रोगः यस्य सः।
- (4) कृतबुद्धिः (ऋषिः) | इसका विग्रह वाक्य है – कृता बुद्धिः येन सः।

यहाँ प्रथम वाक्य में 'स्नेहपूर्णा' और 'दृष्टिः' इन दो पदों का समास हुआ है। ये दोनों पद प्रथमा विभक्ति में हैं। अब, ये दोनों पद, अपना जो अर्थ है ('स्नेहपूर्णा' अर्थात् स्नेह से भरी और 'दृष्टिः' अर्थात् नज़र), उस अर्थ को छोड़कर 'कुमारः' ऐसे अन्य पद के अर्थ में आ जाता है। यह अन्य पद के अर्थ में आ जाने की बात को बताने के लिए विग्रह वाक्य में ('यत्') सर्वनाम का योग्य रूप प्रयोग किया जाता है। जैसे कि यहाँ किया गया है। ('यस्य' पद प्रयोग किया गया है। इसी तरह 'लब्धपदः (नीचः)' जैसे प्रयोग में 'लब्धम्' और 'पदम्' इन दो पदों का समास हुआ है। ये दोनों पद प्रथमा विभक्ति वाले हैं और अपने अर्थ को छोड़कर यहाँ 'नीचः' जैसे अन्य पद के अर्थ में आ गए हैं। इस अन्य पद का अर्थ बताने के लिए इसके विग्रह वाक्य में यहाँ 'येन सः' ऐसे दो सर्वनामों का प्रयोग किया गया है। इससे इसका विग्रह वाक्य 'लब्धं पदं येन सः' है। इस प्रकार बहुव्रीहि विशेषण बनता है। उदा., पीताम्बरः विष्णुः।

इसी प्रकार बहुव्रीहि के सभी प्रयोगों में समास व्यवस्था करनी होती है।

उपर्युक्त अनुसार बहुव्रीहि समास में प्रयुक्त दोनों पद अन्य पद का अर्थ देते हैं। इसी कारण यह बहुव्रीहि समासान्त पद प्रायः विशेषण के रूप में प्रयोग होता है। इसलिए बहुव्रीहि समास वाले पद का लिंग उसके विशेष के लिंग की तरह रखना होता है, जिससे वह बदलता रहता है। अर्थात् यदि विशेष पुलिलंग हो, तो बहुव्रीहि समासान्त पद भी पुलिलंग में रखा जाता है। यदि विशेष स्त्रीलिंग हो, तो बहुव्रीहि समासान्त पद भी स्त्रीलिंग में रखा जाता है और यदि विशेष नपुंसकलिंग हो, तो बहुव्रीहि समासान्त पद भी नपुंसकलिंग में रखा जाता है।

स्वाध्याय

1. अधोलिखितानां पदानां समासप्रकारं लिखत ।

- | | | | |
|-----------------------|-------|------------------|-------|
| (1) शिलालिखितम् | | (2) नीतिनिपुणः | |
| (3) प्रत्युत्पन्नमतिः | | (4) लब्धविजयाः | |
| (5) प्रकृतिनिर्मिताः | | (6) अधिगततत्त्वः | |

2. निम्नलिखितानि पदानि संयोज्य योग्यं समासं विरचयत ।

- | | | | |
|---------------------|-------|-----------------|-------|
| (1) तीक्ष्ण + तुण्ड | | (2) कृत + कार्य | |
| (3) न + प्राप्त | | (4) गभीर + जल | |
| (5) उग्र + स्वभाव | | | |

3. क-विभागं ख-विभागेन सह संयोजयत ।

क	ख
(1) भग्नदन्ता	(1) इतरेतर द्वन्द्वः
(2) प्राप्तबुद्धिः	(2) बहुव्रीहि (पुं.)
(3) परिवारजनः	(3) षष्ठी तत्पुरुष ।
(4) भयक्रोधौ	(4) बहुव्रीहि (स्त्री.)
(5) महावृक्षः	(5) कर्मधारय
	(6) द्वितीया तत्पुरुष



नीचे का वाक्य देखिए :

(1) राक्षसेभ्योऽपि भवन्त एव क्रूरतराः। (राक्षसों से भी आप अधिक क्रूर हैं।)

इस वाक्य में प्रयुक्त प्रथम पद (राक्षसेभ्योऽपि) में '०' प्रकार का चिह्न दिखाई दे रहा है, उसे अवग्रह कहते हैं। संस्कृत भाषा में इस चिह्न का अक्सर उपयोग होता रहता है, इसलिए इस अवग्रह का उच्चारण जानना जरूरी है।

वास्तव में इस अवग्रह चिह्न का स्वतंत्र रूप से कोई उच्चारण नहीं करना होता है। यह अवग्रह का चिह्न तो अपने से पहले आए वर्ण का उच्चारण करने में मात्र मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है। जैसे कि प्रस्तुत उदाहरण में मूल में तो 'राक्षसेभ्यः' और 'अपि' ऐसे दो पद थे। संधि के पश्चात् वे 'राक्षसेभ्योऽपि' रूप में हैं। यहाँ प्रयुक्त इस अवग्रह चिह्न पर से यह समझना है कि आगे के 'ओ' वर्ण में पीछे का 'अ' वर्ण मिल गया है, इसलिए जब 'ओ' वर्ण का उच्चारण करना होता है, तब 'ओ' वर्ण पर थोड़ा भार देना पड़ता है। (प्रत्यक्ष रूप से तो आप अपने शिक्षक से इसका उच्चारण सीख सकेंगे। फिर भी आप स्वयं 'सरोवरः' और 'सरोऽपि' दोनों शब्दों का उच्चारण करके देखिए। आपको दोनों स्थानों से उच्चारित 'ओ' वर्ण के उच्चारण का भेद पता चलेगा।

अब, इसी वाक्य में प्रयुक्त दूसरे चिह्न की तरफ ध्यान दीजिए। 'क्रूरतराः।' शब्द के अन्त में 'ः' इस प्रकार का एक चिह्न प्रयोग किया गया है। इसे विसर्ग कहते हैं। इसका उच्चारण सहज 'ह' वर्ण जैसा होता है। संस्कृत भाषा में इस विसर्ग का व्यापक रूप से प्रयोग हुआ है।

इतना समझ लेने के पश्चात् अब, नीचे के कुछ वाक्यों को पढ़िए :

- (1) अधुना अस्माभिः किं (अस्माभिः किं) कर्तव्यम्।
- (2) युधिष्ठिरादयश्च (युधिष्ठिरादयः च) भवन्तमभिवादयन्ति।
- (3) भवता श्रोतव्यो जनार्दनस्य (श्रोतव्यः जनार्दनस्य) सन्देशः।
- (4) भवन्त एव (भवन्तः एव) क्रूरतराः।
- (5) शत्रोरपि (शत्रोः अपि) गुणाः ग्राह्णाः।

उपर्युक्त पाँचों वाक्यों में कोष्ठक के अन्दर जो पदावली दी गई है, वह विसर्ग का मूल रूप सूचित करता है जब कि वाक्य में उस विसर्ग का संधि करने के बाद वाला प्रयोग दर्शाया गया है। आप देख सकते हैं कि -

- (1) प्रथम वाक्य में विसर्ग वैसा का वैसा ही है।
- (2) दूसरे वाक्य में विसर्ग के स्थान पर 'श' वर्ण प्रयोग हुआ है।
- (3) तीसरे वाक्य में विसर्ग के बदले 'ओ' हो गया है।
- (4) चौथे वाक्य में विसर्ग नहीं दिखाई दे रहा है। (विसर्ग का लोप हो गया है।)
- (5) पाँचवें वाक्य में विसर्ग के स्थान पर 'र' दिखाई दे रहा है।

इससे पता चलता है कि संस्कृत वाक्यरचना में विसर्ग संधि का प्रयोग करना हो, तो विसर्ग अपने स्वरूप के उपरांत कम से कम दूसरे चार रूप (विसर्ग के स्थान में 'श' वर्ण, विसर्ग के बदले 'ओ', विसर्ग का लोप और विसर्ग के स्थान पर 'र') ले सकते हैं। इस स्थिति में यह जान लेना जरूरी होता है कि किस स्थान पर विसर्ग कौन-सा रूप लेता है। इसके लिए संधि के कुछ नियम जानने चाहिए। जैसे कि,

(1) विसर्ग के बाद (क) 'च' 'छ' और 'श' आए, तो विसर्ग के स्थान में 'श' हो जाता है। (ख) 'ट', 'ठ' और 'ष' आए, तो 'ष' और (ग) 'त', 'थ' और 'स' हो जाता है।

जैसे कि, युधिष्ठिरादयः च। यहाँ विसर्ग के पश्चात् 'च' है, इसलिए विसर्ग के स्थान में 'श' हो करके 'युधिष्ठिरादयश्च' ऐसा प्रयोग होता है।

(2) विसर्ग के पहले यदि 'अ' (अ-वर्ण) हो और विसर्ग के बाद 'अ' या कोई घोष वर्ण (वर्ग के तीसरे, चौथे और पाँचवें वर्ण को घोषवर्ण कहते हैं।) हो, तो विसर्ग का 'ओ' हो जाता है।

जैसे कि; श्रोतव्यः जनार्दनस्य। यहाँ विसर्ग के पहले ('य' मानो) 'अ' वर्ण है और विसर्ग के बाद (च, छ, ज, झ, ज् यह 'च' वर्ग है। उनमें से तीसरा) 'ज्' है, इसलिए यहाँ विसर्ग के स्थान में 'ओ' हो जाता है और 'श्रोतव्यो जनार्दनस्य' इस तरह प्रयोग होता है।

(3) (क) विसर्ग के पहले यदि 'आ' (दीर्घ अवर्ण) हो और विसर्ग के बाद स्वर, घोष (वर्ग का तीसरा, चौथा और पाचवाँ) वर्ण अथवा अंतःस्थ (य् र् ल् व् में से कोई एक) वर्ण हो, तो विसर्ग का लोप हो जाता है। (ख) विसर्ग के पहले यदि 'अ' (हस्त अवर्ण) हो और विसर्ग के पीछे 'अ' के अलावा कोई भी अन्य स्वर हो, तो भी विसर्ग का लोप हो जाता है।

जैसे कि; विघ्नविहताः विरमन्ति। यहाँ 'ता' में आए 'आ' वर्ण के बाद विसर्ग है और उस विसर्ग के पीछे 'व्' अंतःस्थ वर्ण है, जिससे ('क' नियम अनुसार) विसर्ग का लोप अर्थात् अदर्शन हो जाता है और 'विघ्नविहता विरमन्ति।' ऐसा संधि प्रयोग होता है। इसी तरह 'भवन्तः एव' प्रयोग भी 'त' में स्थित 'अ' वर्ण के बाद विसर्ग है और उस विसर्ग के बाद 'ए' स्वर आया है, जिससे विसर्ग का लोप हो करके 'भवन्त एव' ऐसा प्रयोग होता है।

(4) विसर्ग के पहले 'अ' या 'आ' स्वर के अतिरिक्त कोई भी स्वर हो और विसर्ग के बाद कोई भी स्वर अथवा घोष व्यंजन में से कोई वर्ण आया हो, तो विसर्ग के स्थान पर 'र्' (रेफ) हो जाता है।

जैसे कि; शत्रोः अपि। यहाँ 'त्रो' में स्थित 'ओ' वर्ण के बाद विसर्ग आया है और विसर्ग के बाद 'अ' स्वर आया है, जिससे विसर्ग के स्थान में 'र्' होकर 'शत्रोरपि।' ऐसा संधि रूप बनता है। तथा नीतिः + न की संधि नीतिर्न होती है।

ध्यान में रखिए : उपर्युक्त नियम - 2 अनुसार जहाँ विसर्ग का 'ओ' होता है, वहाँ विसर्ग का 'ओ' होने के बाद यदि 'अ' वर्ण हो, तो वह खिसक जाता है। जैसे, (राक्षसेभ्यः अपि) राक्षसेभ्योऽपि। यहाँ विसर्ग के पूर्व ('भ्य' मानो) 'अ' वर्ण है और विसर्ग के बाद 'अ' वर्ण है। जिससे यहाँ विसर्ग के स्थान में 'ओ' होता है – राक्षसेभ्यो अपि। इसके बाद पीछे स्थित 'अपि' में का 'अ' उस 'ओ' में मिल जाता है। इस बात की सूचना देने के लिए ऐसे स्थान पर अवग्रह का चिह्न रखा जाता है।

स्वाध्याय

1. नियमानुसारं विसर्गसन्धिं कुरुत ।

- (1) मानवाः सन्तु निर्भयाः।
- (2) सुखिनः सर्वे सन्तु।
- (3) अनाथः दरिद्रः जरारोगयुक्तः।
- (4) दास्याः पुत्रः व्याघ्रः मद्द्ययेन मयूररूपं गृहीत्वा पलायते।
- (5) नीचः प्रायेण दुःसहो भवति।

2. सन्धिविच्छेदं कृत्वा वाक्यानि पुनः लिखत ।

- (1) सं वो मनांसि जानताम् ।
- (2) अनेन तुषेभ्यस्तण्डुलाः पृथक् सञ्चाताः ।
- (3) अनाथ इव व्याघ्रेण खादितोऽस्मि ।
- (4) अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते ।
- (5) चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।

3. क-वर्गेण सह ख-वर्गस्य मेलनं कुरुत ।

क

- (1) सुजनो न
- (2) गतिस्त्वम्
- (3) परोऽपि
- (4) स्वर्गस्थितः कर्दनः
- (5) वृद्ध इव

ख

- (1) विसर्गस्य लोपः
- (2) विसर्गस्य सन्धिः न
- (3) विसर्गस्य रेफः
- (4) विसर्गस्य सकारः
- (5) विसर्गस्य ओकारः अवर्णस्य परतः
- (6) विसर्गस्य ओकारः

● ● ●